॥श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम्॥

श्रीश्रीप्रबोधानन्दसरस्वतिपाद विरचितः

श्रीश्रीराधारससुधानिधिः

निन्दन्तं पुलकोत्करेण विकसन्नीप प्रसूनच्छविं,
प्रोर्द्धीकृत्यभुजद्वयं हरिहरीत्युच्चैर्वदन्तं मुहुः।
नृत्यन्तं द्रुतमश्रु निर्झरचयैः सिञ्चन्तमुर्वीतलं,
गायन्तं निजपार्षदैः परिवृतं श्रीगौरचन्द्रं नुमः॥१॥

श्रीराधाभावरसमाधुर्य में चित्त आविष्ट होने से उद्दीप्त सात्त्विक भावोत्थ पुलक निचय द्वारा जो प्रस्फुटित कदम्ब कुसुम की च्छटा की निन्दा कर रहे हैं। चंचल भावभंगि से नृत्य करते हैं, श्रीकृष्ण विहारिणी श्रीराधाभाव का अनुकरण कर अश्रु निर्झर की धारा से धरातल को अभिषिक्त कर रहे हैं एवं कीर्तनरत निज भक्तगणके द्वारा परिवेष्टित हैं, उन स्वप्रेमामृत प्रदान से भूवनोल्लासकारी श्रीगौरचन्द्र को हम सभी नमस्कार करते हैं।॥१॥

यस्याः कदापि वसनाञ्चलखेलनोत्थ,
धन्यातिधन्य पवनेन कृतार्थमानी।
योगीन्द्र दुर्गमगतिर्मधुसूदनोऽपि,
तस्या नमोस्तु वृषभानुभुवो दिशेऽपि॥२॥

निकुञ्जलीला विहार अवसर में योगीन्द्र महादेव की दुर्गमगति मधुसूदन अर्थात् रसिक शेखर श्रीकृष्ण जिनका वसनाञ्चल से उत्थित धन्यातिधन्य पवन के स्पर्श से निज को कृतार्थ मानते हैं, उन वृषभानु राजनन्दिनी श्रीराधा जहाँ पर विराजित हैं, उस कालिन्दी पुलिनवर्ती अतिरम्य श्रीवृन्दावन के केलिकुंज जहाँ अवस्थित हैं, वह दिक् भी अति धन्यातिधन्य है, उसको नमस्कार है।।२॥

ब्रह्मेश्वरादि सुदुरूह पदारविन्द,
श्रीमत्पराग परमाद्भुत वैभवायाः।
सर्वार्थसार रसवर्षिकृपार्द्रदृष्टे-
स्तस्या नमोस्तुवृषभानु भुवो महिम्ने ॥३॥

जो ब्रह्मेश्वरादि के सुदुर्लभ श्रीचरण-कमल रेणु का परमाद्भुत वैभव से महाऐश्वर्यवती है एवं सर्वार्थसार श्रीकृष्ण प्रेमरस वर्षिणी कृपा दृष्टि से महामाधुर्य्यवती है। उन वृषभानुराजनन्दिनी श्रीराधा की महामहिमा को नमस्कार करता हूँ ॥३॥

यो ब्रह्मरुद्रशुकनारदभीष्ममुख्यै
रालक्षितो न सहसा पुरुषस्य तस्य।
सद्योवशीकरण चूर्णमनन्तशक्तिं,
तं राधिकाचरणरेणुमनुस्मरामि।।४॥

शिव विरिञ्चि शुक नारद भीष्म प्रभृति श्रेष्ठ भागवतगण भी अयोग्यता हेतु सहसा जिनका दर्शन करने में असमर्थ हैं, उन परमपुरुष को वशीभूत करने के लिए अनन्तशक्ति सम्पन्ना चूर्णौषधि की भाँति श्रीराधिका के श्रीचरण रेणु का मैं अनुस्मरण करता हूँ।।४।।

आधाय मूर्द्धनि यदा पुरुदारगोप्य:,
काम्यं पदं प्रियगुणैरपि पिच्छमौले:।
भावोत्सवेन भजतां रसकामधेनु,
तं राधिकाचरणरेणुमहं स्मरामि ॥५॥

उदार स्वभावा गोपीगणों ने जिस श्रीचरण रेणु को निज मस्तक में धारणकर शिखिपुच्छचूड़ाधारी नागरमणि श्रीकृष्ण के प्रिय गुण के साथ काम्यपद को प्राप्त किया है एवं जो भावोत्सव के द्वारा भजनकारी भक्तजनों के रसलाभ के लिए कामधेनुस्वरूप हैं, उन श्रीराधिका के श्रीचरण की रेणु का स्मरण करूँ॥५॥

दिव्यप्रमोदरससारनिजाङ्गसङ्ग,
पीयूषवीचि निचयैरभिषेचयन्ती।
कन्दर्प कोटि शरमूर्च्छित नन्दसूनु
सञ्जीवनी जयति कापि निकुंजदेवी॥६॥

चिन्मय आनन्द रससाररूप निजांग संगसुधा तरंग समूह के द्वारा जो श्रीनन्दनन्दन को सर्वतोभाव से अभिषिक्त कर रही हैं एवं संजीवनी महौषधि जिस प्रकार मूर्च्छित युद्धवीर को जीवित करती है, उस प्रकार असंख्य कन्दर्प शरविद्ध मूर्च्छित श्रीनन्दनन्दन की संजीवनी महौषधिस्वरूपा निकुंजदेवी सर्वोत्कर्ष से विराजित हैं॥६॥

तन्न: प्रतिक्षण चमत्कृत चारुलीला
लावण्य मोहनमहामधुराङ्गभङ्गि।
राधाननं ही मधुराङ्ग कलानिधान
माविर्भविष्यति कदा रससिन्धुसारम्॥७॥

जिनके लीला लावण्य क्षण-क्षण में चमत्कार एवं मनोहर हैं, वह भुवनमोहन श्यामसुन्दर के महामधुरांग का त्रिभंग भंगिमाकारी जो श्रीराधानन मधुरांग की कला का निधान है एवं रससिन्धु का सारस्वरूप है, ऐसे श्रीराधामुखचन्द्र कब हमारे नयनगोचर होंगे? ॥७॥

यत्किंकरीषु बहुश: खलु काकुवाणी,
नित्यं परस्य पुरुषस्य शिखण्ड मौले:।
तस्या: कदा रस निधेर्वृषभानुजाया-
स्तत्केलिकुञ्ज भवनाङ्गन मार्जनीस्याम्॥८॥

शिखिपुच्छधारी श्यामनागरमणि परमपुरुष होकर भी केलि कुंजभवनांगन में प्रवेश एवं निर्गम के निमित्त जिनकी किंकरीगण के निकट नित्य अनेक बार कातर वाक्य से प्रार्थना करते रहते हैं, मैं श्रीकृष्ण के हृदयनिधिस्वरूपा उन वृषभानुनन्दिनी श्रीराधा की केलिकुंजान्तर्गत गृह प्रांगण की माऊंनी कब बनूँगा ? ॥८॥

वृन्दानिसर्वमहतामपहाय दूराद्
वृन्दाटवीमनुसर प्रणयेन् चेत:।

सत्तारणीकृत सुभाव सुधारसौघं,
राधाभिधानमिह दिव्य निधानमस्ति ॥९॥

हे मन! तुम निखिल महत् वस्तुओं की आसक्ति को सुदूर से छोड़कर, प्रीति के साथ श्रीवृन्दावन धाम का अनुसरण करो, वहाँ सर्वसज्जनों के उद्धार परायण, सुभाव सुधारस के प्रवाहस्वरूप श्रीराधानामक सर्वाद्भुत सर्वाभीष्टप्रद दिव्यनिधि विराजित हैं।।९॥

केनापि नागरवरेण पदेनिपत्य,
संप्रार्थितक परिरम्भरसोत्सवाया:।
सभ्रू-विभङ्गमतिरङ्गनिधे: कदा ते,
श्रीराधिके नहिनहीति गिर: शृणोमि॥१०॥

हे श्रीराधिके ! किसी विदग्धचूडामणि श्रीकृष्ण आपके श्रीचरणों में गिरकर एकबारमात्र आलिंगन प्रार्थना करने से आप उस नित्यास्वाद्य आलिंगन रस के अनुभव से प्रमोदित होकर सभ्रूभंग अतिरंग निधिरूप में अर्थात् बाहर रोष प्रदर्शनार्थ भ्रूभंग एवं अन्तर में अतिशय कौतुहल प्रकाश करना, इस प्रकार कुट्टमित भाव का आधारस्वरूप होकर 'ना ना' कहोगी, मैं कब उस वचन को सुनूँगा? ॥१०॥

यत्पादपद्मनखचन्द्रमणिच्छटाया:,
विस्फूर्जितं किमपि गोपबधूष्वदर्शि।
पूर्णानुरागरससागरसारमूर्ति:,
सा राधिका मयि कदापि कृपां करोतु॥११॥

असंख्य गोपांगना के मध्य में, मैंने केवल जिनके श्रीचरणकमल के नखचन्द्रमणिच्छटा का अनिर्वचनीय विस्फुर्जन का दर्शन किया है, उस पूर्णानुराग रससिन्धु का सारमादनाख्य महाभावमयीमूर्ति श्रीराधिका कब मुझ पर कृपा करेंगी? ॥११॥

उज्जृम्भमाणरसवारिनिधेस्तरङ्गै-
रङ्गैरिव प्रणयलोलविलोचनाया:।
तस्या कदा नु भविता मयि पुण्यदृष्टि,
वृन्दाटवीनवनिकुञ्जगृहाधिदेव्या: ॥१२॥

उत्फुल्लमान् रससागर श्रीकृष्ण के श्रीअंग माधुर्य्यरूप तरंगसमूहोत्थ प्रणय के द्वारा अथवा उनके प्रणय लाभार्थ जिनके नयन युगललोल हैं, उस श्रीवृन्दावन नवनिकुंज गृह की अधिदेवी श्रीराधा की पुण्यदृष्टि मेरे प्रति कब होगी? ॥१२॥

वृन्दावनेश्वरि तवैव पदारविन्द,
प्रेमामृतैकमकरन्दरसौघपूर्ण।
हृद्यर्पितं मधुपते: स्मरतापमुग्रं,
निर्वापयत्परमशीतलमाश्रयामि ॥१३॥

कृष्णरागगुरु शालवनी मलाही, नेपाल, फोन: ९८४४९५५३५०

हे श्रीवृन्दावनेश्वरि ! रसिक भ्रमर श्रीकृष्ण आपके प्रेमरस सारभूत मकरन्द रसप्रवाहपूर्ण श्रीचरणकमल को निज हृदय में धारणकर तीव्र कन्दर्प ज्वाला को शान्त करते हैं, मैं उन परम शीतल श्रीचरणकमल का भजन करता हूँ।।१३।।

राधाकरावचितपल्लववल्लरीके,
राधापदांकविलसन्मधरस्थलीके।
राधायशोमुखरमत्तखगावलीके,
राधाविहारविपिने रमतां मनो मे॥१४॥

जहाँ पर पल्लवयुक्त लता मंजरी श्रीराधा के कर-कमल युगल द्वारा संस्पृष्ट, श्रीराधा के पदचिह्न के द्वारा शोभिता मधुरस्थली अवस्थित एवं प्रेमोन्मत्त विहंगावली के द्वारा श्रीराधा के यशोगान से मुखरित है, श्रीराधा के उस विहार विपिन में मेरा मन रत हो॥१४॥

कृष्णामृतं चल विगाढुमितीरिताहं,
तावत्सहस्व रजनी सखि यावदेति।
इत्थं विहस्य वृषभानुसुतेह लप्स्ये,
मानं कदा रसदकेलिकदम्बजातं॥१५॥

स्नान करने के लिए श्रीयमुना को चलो, कहने से श्रीवृषभानुनन्दिनी हँसकर बोलेंगी, सखी ! जब तक रजनी है, तब तक ठहरो, इस प्रकार रसदकेलि कदम्बजात मान लाभ मैं कब करूँगा? ॥१५॥

पादाङ्गुलीनिहितदृष्टिमपत्रपिष्णुं,
दूरादुदीक्ष्य रसिकेन्द्रमुखेन्दुबिम्बम्।
वीक्षे चलत्पदगतिं चरितांभिरामां,
झंकारनूपुरवतीं वत कर्हि राधाम्॥१६॥

रसिकेन्द्र श्रीकृष्ण के मुखेन्दुबिम्ब को दूर से देखकर जो लज्जा से निज चरणांगुली में दृष्टि न्यस्त कर रमणीय स्वभावयुक्त हुई हैं एवं नूपुर की झंकार के साथ पदक्षेप कर रही हैं, आहा ! मैं उन श्रीवृषभानुनन्दिनी का दर्शन कब करूँगा? ॥१६॥

उज्जागरं रसिकनागरसङ्गरङ्गः,
कुंजोदरे कृतवती नु मुदा रजन्याम्।
सुस्नापिता हि मधुनैव सुभोजिता त्वं,
राधे कदा स्वपिषि मत्करलालितांघ्रिः॥१७॥

हे श्रीराधे ! केलिकुंज भवन में रसिकनागर श्रीकृष्ण के साथ रजनी जागरण हेतु प्रातःकाल में स्नान क्रिया समापनान्ते रसालादि सुमिष्ट भक्ष्य द्रव्य भोजन पूर्वक मेरे कर-युगल द्वारा सेवित चरणा होकर कब विश्राम करोगी? ॥१७॥

वैदग्ध्यसिन्धुरनुरागरसैकसिन्धु,
र्वात्सल्य सिन्धुरतिसांद्रकृपैक सिन्धुः।
लावण्यसिन्धुरमृतच्छविरूपसिन्धुः,

कृष्णा गोयल लालन्दी, पलाही, पाल, फोन:-९८४९४३५०

श्रीराधिका स्फुरतु मे हृदि केलि सिन्धुः।।१८॥

सप्तसिन्धुवती पृथ्वी की भाँति वैदग्ध्यसिन्धु, अनुरागरससिन्धु, वात्सल्यसिन्धु, अतिस्निग्ध कृपासिन्धु, लावण्यसिन्धु, अमृतच्छविरूपसिन्धु एवं केलिसिन्धु यह विचित्र सप्तसिन्धुवती श्रीराधिका मेरे हृदय में स्फुरित हों॥१८॥

दृष्ट्वैव चम्पकलतेव चमत्कृतागी,
वेणुध्वनि क्व च निशम्य च विह्वलाङ्गी।
सा श्यामसुन्दरगुणैरनुगीयमानैः,
प्रीता परिष्वजतु मां वृषभानुपुत्री॥१९॥

कालिन्दीपुलिन के प्रांगणस्थित श्रीरासमण्डल में मधुर वंशीध्वनि श्रवण कर जिनका अंग चिह्नित हुआ है, उन प्रफुल्ल चम्पकलता की भाँति चमत्कृतांगी वृषभानुपुत्री श्रीराधा, अनुगीयमान श्यामसुन्दर की गुणावली श्रवण से उल्लसित होकर सेवापरा सखी जानकर कब सन्तुष्ट होंगी॥१९॥

श्रीराधिके सुरतरङ्गिनितंबभागे,
काञ्चीकलापकलहंसकलानुलापैः।
मञ्जीरशिञ्जितमधुव्रत गुञ्जिताघ्रि,
पङ्केरुहैः शिशिरय स्वरसच्छटाभिः॥२०॥

हे श्रीराधिके ! हे सुरतरंगि, नितम्बभागे ! काञ्चीकलापरूप कलहंसी की कलध्वनियुक्त नूपुर शिजित भ्रमरगुजित पदपंकज के द्वारा एवं स्वरसच्छटा द्वारा तप्त हृदय को शीतल करो॥२०

श्रीराधिके सुरतरङ्गिणि दिव्यकेलि,
कल्लोलमालिनि लसद्वदनारविन्दे।
श्यामामृतांबुनिधिसङ्गमतीव्रवेगि,
न्यावर्त्तनाभिरूचिरे मम सन्निधेहि॥२१॥

हे दिव्य केलिकल्लोल मालिनि ! हे शोभमानवदनारविन्दे ! हे श्यामसुधा सागरसंगमार्थ तीव्रवेगवति ! सुरतरंगिणी-सुरतरंगिणी, श्रीराधिके! दर्शन दान करो॥२१॥

सत्प्रेमसिन्धुमकरन्दरसौघधारा,
सारानजस्त्रमभितः सर्वदाश्रितेषु।
श्रीराधिके तव कदा चरणारविन्दं,
गोविन्दजीवन धनं शिरसा वहामि।।२२।।

हे श्रीराधिके! तुम्हारे जिन श्रीचरण-कमल से सत् प्रेमसिन्धुमकरन्द रसप्रवाह धारा आश्रितजनों के प्रति सर्वतोभावेन निरन्तर वर्षित होती रहती है, श्रीकृष्ण के जीवनधन स्वरूप उन श्रीचरणारविन्दों का वहन मैं कब मस्तक से करूँगा? ॥२२॥

संकेतकुञ्जमनुकुञ्जरमंदगामि,
न्यादाय दिव्यमृदुचन्दनगन्धमाल्यम्।

त्वां कामकेलिरभसेन कदा चलन्ती,
राधेऽनुयामि पदवीमुपदर्शयन्ती ॥२३ ॥

हे श्रीराधे ! आनन्द उत्सुकता से संकेतकुंज में गमन करते समय मैं दिव्य मृदुचन्दन गन्धमाल्य को लेकर भारवाही कुंजर की भाँति मन्दगति से तुम्हारे पदचिह्न का दर्शन करते-करते अनुगमन करूँगा ॥२३ ॥

गत्वा कलिन्दतनयाविजनावतार,
मुद्वर्त्तयंत्यमृतमङ्गमनङ्गजीवम् ।
श्रीराधिके तव कदा नवनागरेन्द्र,
पश्यामि मग्ननयनंस्थितमुच्चनीपे ॥२४ ॥

हे श्रीराधिके ! श्रीयमुना के निर्जन तीर्थ प्रदेश में जाकर तुम्हारे अनंग जीव अमृतांग का उद्वर्तन करते-करते मैं उच्च कदम्ब वृक्ष की शाखा में बैठकर निविष्ट चित्त से तुम्हारे अंग दर्शनकारी नव नागरेन्द्र श्रीकृष्णचन्द्र को कब देखूगा ॥२४ ॥

सत्प्रेमराशिसरसो विकसत्सरोज,
स्वानन्दसीधुरससिन्धुविवर्द्धनेन्दुम् ।
तच्छ्रीमुखं कुटिलकुंतल गजुष्टं,
श्रीराधिके तव कदा नु विलोकयिष्ये ॥२५ ॥

हे श्रीराधे ! जो सत्प्रेमराशिरूप सरोवर के प्रफुल्ल कमल सदृश है तथा आनन्दमय श्रीकृष्ण के उन्मादक सीधुस्वरूप एवं रससिन्धु विवर्द्धन हेतु चन्द्र के समान है, कुटिल कुन्तल सेवित तुम्हारे श्रीमुख का दर्शन मैं कब करूँगा? ॥२५ ॥

लावण्यसाररससारसुखैकसारे,
कारुण्यसारमधुरच्छविरूपसारे ।
वैदग्ध्यसाररतिकेलिविलाससारे,
राधाभिधे मम मनोखिलसारसारे ॥२६ ॥

जो लावण्य की सारमूर्ति, रसराज श्रीकृष्ण के सुख का एकमात्र सार, कारुण्यसार रचित मधुरच्छविरूपसार एवं वैदग्ध्यसार रतिकेलि विलास का सार है। उन निखिल सारात्साररूप श्रीराधानामक परमवस्तु में मेरी मति हो ॥२६ ॥

चिन्तामणिः प्रणमतां ब्रजनागरीणां,
चूड़ामणिः कुलमणिर्वृषभानुनाम्नः ।
सा श्यामकामवरशान्तिमणिनिकुञ्ज.
भूषामणिहृदयसंपुटसन्मणिनः ॥२७ ॥

जो प्रणतजनों के लिए चिन्तामणिस्वरूपा, ब्रजनागरीवृन्द की चूड़ामणि, श्रीवृषभानुराज की कुलमणि हैं, श्रीश्यामसुन्दर के तीव्र कन्दर्प विषनाशक शान्तिमणिस्वरूपा, केलिकुंज भूषामणि श्रीराधा मेरे हृदय सम्पुट में मणिरूप में विराजित हों ॥२७ ॥

मजुस्वभावमधिकल्पलतानिकुञ्ज,

व्यंजन्तमद्भुतकृपारसपुञ्जमेव।
प्रेमामृतांबुधिमगाधमबाधमेतं,
राधाभिधं द्रुतमुपाश्रय साधु चेतः ॥२८॥

हे साधुचेतः ! संकल्पाधिक कामपूरक कल्पलता निकुंजस्वरूप, अद्भुत कृपामृत रसपुंज प्रकाशक एवं अगाध अवाध प्रेमामृतसिन्धुस्वरूप मधुर स्वभाव हैं, उन श्रीराधानामक परमवस्तु का सत्वर आश्रय ग्रहण करो॥२८॥

श्रीराधिका निजविटेन सहालपन्ती,
शोणाधरप्रसृमरच्छविमञ्जरीकाम्।
सिन्दूरसम्बलितमौक्तिकपंक्तिशोभां,
यो भावयेद्दशनकुंदवतीं स धन्यः।।२९॥

जो निज नाथ के सहायक विट के साथ आलाप रत हैं, जिनके अरुणाधर में प्रसरणशीला सुषमामंजरी प्रकटित है, सीमन्त में सिन्दूर सम्बलित भौतिक पंक्ति सुशोभित है, उन कुन्ददशना श्रीराधिका की भावना जो करता है, वह धन्य हैं।॥२९॥

पीतारुणच्छविमनंततडिल्लताभां,
प्रौढ़ानुरागमदविह्वलचारुमूर्तिम्।
प्रेमास्पद ब्रजमहीपतितन्महिष्यो,
गोंविन्दवन्मनसि तां निदधामि राधाम्॥३०॥

जिनकी चारुमूर्ति प्रौढानुराग मदविह्वला है एवं ब्रजमहीपति तदीय महिषी की प्रेमपात्री है, उन पीतारुणच्छवि अनन्त तडिल्लताभा श्रीराधा का स्थापन मैं मनोमध्य में करता हूँ ॥३०॥

निर्माय चारुमुकुटं नवचन्द्रकेण,
गुजाभिरारचित हारमुपाहरन्ती।
वृन्दाटवी नवनिकुञ्ज गृहाधिदेव्याः,
श्रीराधिके तव कदा भवितास्मि दासी॥३१॥

हे श्रीराधिके ! आप श्रीवृन्दावनीय नवनिकुंज गृह की अधिष्ठात्री देवी हो, मैं कब अभिनव मयूरपिञ्छ से चारुमुकुट निर्माण कर तथा गुंजा रचित हार लेकर उपहार प्रदानकारिणी दासी बनूँगी॥३१॥

सङ्केतकुञ्जमनुपल्लवमास्तरीतुं,
त्वत्प्रसादमभितः खलु संवरीतुम्।
त्वां श्याम चन्द्रमभिसारयितुं धृताशे,
श्रीराधिके मयि विधेहि कृपाकटाक्षम्॥३२॥

हे श्रीराधिके ! प्रति संकेत कुंज में विहार हेतु नवपल्लव आस्तृत करने तथा तत्तत् स्थान में आप दोनों की कृपा निर्माल्य शीघ्र प्राप्त करने एवं आपको श्रीश्यामसुधाकर के समीप में अभिसार कराने का अभिलाषी हूँ, मेरे प्रति कृपादृष्टिपात करो॥३२॥

दूराद्पास्य स्वजनान्सुखमर्थकोटिं,

सर्वेषु साधनवरेषु चिरं निराशः।
वर्षन्तमेव सहजाद्भुतसौख्यधारां,
श्रीराधिकाचरणरेणुमहं स्मरामि॥३३॥

श्रेष्ठ साधन समूह के प्रति आशाहीन मैं आत्मीय स्वजन तत्सम्बन्धीय सुख अर्थादि को दूर से छोड़कर सुखधारा वर्षणकारी श्रीराधा के श्रीचरण की रेणु का स्मरण करता हूँ॥३३॥

वृन्दाटवीप्रकटमन्मथकोटिमूर्तेः,
कस्यापि गोकुलकिशोरनिशाकरस्य।
सर्वस्वसंपुटमिव स्तनशातकुम्भ
कुम्भद्वयं स्मर मनो वृषभानुपुत्र्याः॥३४॥

हे मनः ! श्रीवृन्दावन में प्रकट कोटिकन्दर्प मूर्ति गोकुल किशोरचन्द्र के सर्वस्व सम्पुटतुल्य वृषभानु सुपुत्री श्रीराधा के वक्षोज कनककुम्भद्वय का स्मरण करो॥३४॥

सांद्रानुरागरससारसरः सरोज,
किंवा द्विधा मुकुलितं मुखचन्द्रभाषा।
तन्नूतनस्तनयुगं वृषभानुजायाः,
व स्वानन्दसीधुमकरंदघनं स्मरामि ॥३५॥

प्रगाढ़ प्रेमरससाररूप सरोवर में श्रीमुखचन्द्र की आभा से द्विधा मुकुलित कमल सदृश एवं स्वीय आनन्दरूप सुधामकरन्द का मेघस्वरूप उन वृषभानुनन्दिनी श्रीराधा के नवोद्भिन्न वक्षोजयुगल का स्मरण करूँ॥३५।।

क्रीड़ासरः कनकपङ्कजकुट्नलाय,
स्वानन्दपूर्णरसकल्पतरोः फलाय।
तस्मै नमो भुवनमोहनमोहराय,
श्रीराधिके तव नवस्तनमण्डलाय॥३६॥

हे श्रीराधिके ! विहार सरोवर में कनक कमल कोरकतुल्य, स्वानन्द पूर्णरस कल्पतरु के फलस्वरूप एवं भुवनमोहन श्यामसुन्दर के विमोहक नववक्षोज मण्डल को नमस्कार है॥३६॥

पत्रावली रचयितुं कुचयोःकपोले,
बटुं विचित्रकबरी नवमल्लिकाभिः।
अङ्गं च भूषयितुमाभरणैधृताशे,
श्रीराधिके मयि विधेहि कृपावलोकम्॥३७॥

हे श्रीराधिके ! आपके कुच, कपोलादि में पत्रभंग की रचना करने तथा नवमल्लिका के द्वारा विचित्र कबरी बन्धन करने एवं नानाविधि द्वारा श्रीअंग विभूषित करने का मैं अभिलाषी हूँ, मुझे कृपावलोकन करो॥३७॥

श्यामेति सुन्दरवरेति मनोहरेति,
कंदर्पकोटिललितेति सुनागरेति।
सोत्कण्ठमह्नि गृणती मुहुराकुलाक्षी,
सा राधिका मयि कदा नु भवेत्प्रसन्ना॥३८॥

जो प्रियतम के अदर्शन से आकुलाक्षी होकर उत्कण्ठायुक्त दिवस में हे श्याम ! हे सुन्दरवर ! हे मनोहर ! हे कन्दर्पकोटि ललित ! हे सुनागर ! कहकर बाम्बार विलाप करती रहती हैं, वे श्रीराधिका कब मेरे प्रति प्रसन्न होंगी? ॥३८॥

वेणुः करान्निपतितः स्खलितं शिखण्डं,
भ्रष्टं च पीतवसनं ब्रजराजसूनोः।
यस्याः कटाक्षशरपातविमूर्च्छितस्य,
तां राधिका परिचरामि कदा रसेन॥३९॥

जिनके कटाक्षशरपात से मूर्च्छित नन्दनन्दन के कर से वेणु निपतित, शिखण्ड स्खलित, पीतवसन भ्रष्ट हो गया है, उन श्रीराधिका की परिचर्या मैं कब श्रीकृष्ण के साथ करूँगा ? ॥३९।।

तस्याअपाररससारविलास मूर्ते,
रानन्दकन्दपरमाद्भुतसौम्यलक्ष्म्याः ।
ब्रह्मादिदुर्गमगतेवृषभानुजायाः,
कैङ्कटमेव मम जन्मनिजन्मनि स्यात् ।।४०॥

जो अपार रससार श्रीकृष्ण की विलास मूर्ति एवं आनन्दकन्द श्रीनन्दनन्दन की परमाद्भुता सौम्य लक्ष्मीरूपिणी तथा ब्रह्मादि की दुर्गमगति हैं, उन श्रीवृषभानु नन्दिनी श्रीराधा का किंकरीत्व लाभ जन्म-जन्म में मेरा होवे।।४०॥

पूर्णानुरागरसमूर्त्तितडिल्लताभां,
ज्योतिः परं भगवतो रतिमद्रहस्यम्।
यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानुगेहे,
स्यात्किङ्करी भवितुमेव ममाभिलाषः॥४१॥

जो पूर्णानुराग रसमूर्ति की तडिल्लताभ परमज्योति, स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण का भी स्पृहनीय है, सुतरां निगूढ़ है, जिन्होंने कृपापूर्वक श्रीवृषभानु राजभवन में निज को प्रादुर्भूत किया है, उन श्रीराधा की किंकरी होने की मेरी अभिलाषा हो।।४१॥

प्रेमोल्लसद्रसविलासविकासकन्दं,
गोविन्दलोचनवितृप्तचकोरपेयम्।
सिंचन्तमद्भुतरसामृतचन्द्रकौधैः,
श्रीराधिका वदनचन्द्रमहं स्मरामि।।४२।।

प्रेमोल्लासी रसमय श्रीकृष्ण के विलास, विकास के बीजस्वरूप एवं श्रीकृष्ण के अतृप्तलोचन चकोर के पेयतुल्य, सुतरां अद्भुत है, रसामृत चन्द्रिका प्रवाह सिंचनकारी श्रीराधा के वदनचन्द्र का मैं स्मरण करता हूँ।।४२॥

संकेतकुञ्जनिलये मृदुपल्लवेन,
कलुप्ते कदापि नवसंगभयत्रपाढयाम्।
अत्याग्रहेण करवारिरुहे गृहीत्वा,
नेष्ये विटेन्द्रशयने वृषभानुपुत्रीम्॥४३॥

मैं संकेतकुञ्ज भवन में अतिशय आग्रह के साथ कर-कमल युगल को धारणकर नवसंगजनित शंका व लज्जा कुलिता श्रीराधा को मृदुपल्लवरचित विटेन्द्र की विहार शय्या में ले जाऊँगी? ॥४३॥

सद्गन्धमाल्यनवचन्द्रलवङ्गसङ्ग,
तांबूलसंपुटमधीश्वरि मां वहन्तीम्।
श्यामं तमुन्मदरसादभिसंसरंती.
श्रीराधिके करुणयानुचरी विदेहि।।४४॥

हे श्रीराधिके ! उन्मद रसातिशय्य से आप श्यामाभिसार के लिए गमन करती हो, अतएव कृपापूर्वक मुझे सद्गन्धयुक्त माल्य एवं नवकर्पूरयुक्त ताम्बूल सम्पुट वहनकारिणी अनुचरी रूप में ग्रहण करो॥४४॥

श्रीराधिके तव नवोद्गमचारुवृत्त,
वक्षोजमेव मुकुलद्वयलोभनीयम्।
श्रोणीं दधद्रसगुणैरुपचीयमानं,
कैशोरकं जयति मोहनचित्तचोरम्।।४५॥

हे श्रीराधिके ! नवोद्भिन्न चारुवर्तुल स्तनमुकुलद्वय द्वारा लोभनीय, घन जघनमण्डल विशिष्ट श्रीकृष्ण के नित्य सेवनादि गुण द्वारा वर्द्धमान एवं मोहन का भी मनोहर आपका कैशोर की जय हो॥४५॥

संलापमुच्छलदनङ्गतरङ्गमाला,
संक्षोभितेन वपुषा ब्रजनागरेण।
प्रत्यक्षरं क्षरदपाररसामृताब्धिं,
श्रीराधिके तव कदा नु शृणोम्यदूरात्॥४६॥

हे श्रीराधिके ! उत्सिच्यमान् कन्दर्प तरंग माला द्वारा आन्दोलित वपु ब्रजनागर के साथ अक्षर-अक्षर से क्षरित अपर रसामृतसिन्धुस्वरूप आपका संलाप अर्थात् उक्ति प्रत्युक्ति विशिष्ट वाक्य का श्रवण मैं अदूर में रहकर कब करूँगी।॥४६॥

अङ्कस्थितेऽपि दयिते किमपि प्रलापं,
हा मोहनेति मधुरं विदधत्यकस्मात्।
श्यामानुरागमदविह्वलमोहनाङ्गी,
श्यामामणिर्जयति कापि निकुञ्जसीम्नि ।।४७॥

प्राणबन्धु के क्रोड देश में अवस्थित होकर भी 'हा मोहन' कहकर अकस्मात् प्रलापकारिणी एवं श्यामानुराग मदविह्वल मोहनांगी श्यामा नायिका की शिरोमणि श्रीराधिका निकुञ्ज सीमा में जययुक्त हैं।।४७॥

कुञ्जान्तरे किमपि जातरसोत्सवायाः,
श्रुत्वा तदालपितशिञ्जितमिश्रितानि।
श्रीराधिके तव रहः परिचारिकाहं,
द्वारस्थिता रसहदे पतिता कदास्याम्॥४८॥

हे श्रीराधिके ! कुजाभ्यन्तर में अनिर्वचनीय रसोत्सव के आरम्भ में आपकी रह:परिचारिका मैं कुञ्जद्वार में रहकर ईषत् स्फुट मधुरालाप मिश्रित भूषण शिजन श्रवण कर कब रसहद में निमग्ना हो जाऊँगी॥४८॥

वीणां करे मधुमती मधुरस्वरांता,
माधाय नागरशिरोमणिभावलीलाम्।
गायंत्यहो दिनमपारमिवाश्रुवर्षे,
दुःखान्नयंत्यहह सा हृदि मेऽस्तु राधा॥४९॥

जो उत्कट विरह ताप प्रशमनार्थ मधुमती मधुरस्वरा वीणा को लेकर नागर शिरोमणि की भावलीला का गान कर रही है, हाय ! कभी तो अश्रुवर्षण द्वारा जलनिधि के सदृश दुःख दिवस को बिता रही है, वह श्रीराधा मेरे हृदय में उदित होवें।॥४९॥

अन्योन्यहासपरिहासविलासकेलि,
वैचित्र्यजृम्भितमहारसवैभवेन।
वृन्दावने विलसितापहृतं विदग्ध,
द्वन्द्वेन केनचिदहो हृदयं मदीयम्॥५०॥

अहो ! श्रीवृन्दावन में परस्पर हास-परिहास विलासकेलि वैचित्र्य जृम्भित महारस वैभव द्वारा विलासवान् किसी विदग्ध युगल के द्वारा मेरा हृदय अपहृत हुआ है।।५० ।।

महाप्रेमोन्मीलन्नवरससुधासिन्धु लहरी,
परीवाहैर्विश्वं स्नपयदिव नेत्रांतनटनैः।
तडिन्मालागौरं किमपि नवकैशोरमधुरं,
पुरंध्रीणां चूड़ाभरणनवरत्नं विजयते॥५१॥

नेत्रान्त संचालन द्वारा उन्मीलित महाप्रेमरसामृत की तरंगों के उच्छवास से विश्व प्लावनकारी तडिन्मालागौर तथा नवकैशोर मधुर कोई एक नागरीगण के शिरोभूषण नवरत्न सर्वोत्कर्ष के साथ विराजित हैं।।५१॥

अमंदप्रेमांकश्लथसकलनिबन्धहृदयं,
दयापारं दिव्यच्छविमधरलावण्यललितं।
अलक्ष्यं राधाख्यं निखिलनिगमैरप्यतितरां,
रसांभोधेः सारंकिमपि सुकुमारं विजयते॥५२॥

अमन्द श्रीकृष्णप्रेम के चिह्न समूह के द्वारा जिनके हृदय के सभी निर्बन्ध शिथिल हो गये हैं, जो दयासागर के पार हैं, दिव्यकान्ति के मधुर लावण्य द्वारा सुन्दर, निखिल वेद भी जिनके लक्षण निर्णय में असमर्थ हैं एवं रससागर श्रीकृष्ण का सारस्वरूप हैं, वह अनिर्वचनीय सुकुमार श्रीराधाख्यरत्न जययुक्त हैं।॥५२॥

दुकूलं विभ्राणामथ कुचतटे कञ्चुकपट,
प्रसादं स्वामिन्याः स्वकरतलदत्तं प्रणयतः।
स्थितां नित्यं पार्श्वे विविध परिचर्येकचतुरां,
किशोरीमात्मानंकिमिह सुकुमारी नु कलये॥५३॥

मैं प्रीतिपूर्वक स्वामिनी के स्वहस्त से प्रदत्त प्रसादस्वरूप पट्टवस्त्र एवं कुचतट में कंचुलिका धारणकारिणी नित्यपार्श्वस्थिता एवं तदीय विविध परिचर्या चतुरा किशोरी सुकुमारी रूप में क्या आपको मानूँगी॥५३॥

विचिन्वन्ती केशान् क्वचन करजैः कञ्चुकपटं,

क्व चाप्यामुञ्चन्ती कुचकनकदीव्यत् कलशयोः।
सुगुल्फे न्यस्यन्ती क्वचन मणिमञ्जीर युगलं,
कदास्यां श्रीराधे तव सुपरिचारिण्यहमहो ॥५४॥

अहो हे श्रीराधे ! आपके केशपात्र को नख के द्वारा एक-एक कर पृथक् करने, स्वर्ण कलशाकार वक्षोज युगल में कञ्चुली अर्पण करने एवं सुगुल्फ में द्विधाविभक्त मणिमंजीर परिधान कराने के लिए कब परिचारिका बनूँगी ॥५४॥

अतिस्नेहादुच्चैरपि च हरिनामानिगृणत,
स्तथा सौगन्धाद्यैर्बहुभिरुपचारैश्च यजतः।
परानन्दं वृन्दावनमनुचरन्तं च दधतो,
या मनोमे राधायाः पदमृदुल पद्मे निवसतु ॥५५॥

अतिशय स्नेह के साथ उचैःश्वर से हरिनाम ग्रहणकारी तथा कस्तूरी चन्दनादि उपचार द्वारा पूजाकारी एवं वृन्दावन में अनुचरणशील मेरा मन श्रीराधा के श्रीचरण-कमलरूप कोमल पद्म में निवास करे।॥५५॥

निज प्राणैश्वर्या यदपि दयनीयेयमिति मां,
मुहुश्चुम्बत्यालिङ्गति सुरतमाध्यामदयति।
विचित्रां स्नेहर्द्धि रचयति तथाप्यद्भुतगते-
स्तवैव श्रीराधे पदरसविलासे मम मनः।।५६॥

यद्यपि ये दासीजन निज प्राणेश्वरी की दया की पात्री हैं, उस हेतु मुझे स्नेहाधिक्य से बारम्बार चुम्बन कर स्नेह करती हो, सुरतमद के लिए उन्मादित करती हो एवं विचित्र स्नेह मूर्ति की रचना करती हो, तथापि हे श्रीराधे ! अद्भुतगति आपके पदरस विलास में ही मेरा मन अभिनिविष्ट है।।५६॥

प्रीतिं कामपि नाममात्रजनित प्रोद्दामरोमोद्गमां,
राधामाधवयोः सदैव भजतोः कौमार एवोज्वलाम्।
वृन्दारण्य नव प्रसून निचयानानीय कुञ्जान्तरे,
गढं शैशव खेलनैर्वत कदा कार्योविवाहोत्सवः।।५७॥

नाम ग्रहण से ही प्रोद्दाम पुलक विधायिनी अनिर्वचनीया कौमारोज्वला प्रीति का भजन जो सर्वदा कर रहे हैं, रहः केलिकुंज में शैशवक्रीडा की युक्ति से उन श्रीराधा-माधव का विवाहोत्सव कब श्रीवृन्दावन के पुष्पों द्वारा सम्पन्न करूँगा? ॥५७।।

विपञ्चित सुपञ्चमं रुचिरवेणुना गायता,
प्रियेण सहवीणयामधुर गानविद्यानिधिः।
करीन्द्रवन सन्मिलन्मदकरिण्युदारक्रमा,
कदानु वृषभानुजामिलतुभानुजारोधसि ।।५८॥

मधुर वीणा गानविद्या के निधिस्वरूप एवं करीन्द्र के वन सम्मिलन से मदोन्मत्ताकारिणी की भाँति सुन्दर गतिविशिष्टा वृषभानु सुपुत्री श्रीराधा, मनोहर पंचमस्वर से वेणु संगीतकारी प्रियतम श्रीकृष्ण के साथ श्रीयमुना के तीर में कब सम्मिलित होंगी।।५८ ।

सहासवरमोहनाद्भुत विलासरासोत्सवे,
विचित्रवर ताण्डवश्रमजलार्द्रगण्डस्थलौ।
कदानुवरनागरी रसिकशेखरौ तौ मुदा,
भजामि पद लालनाल्ललित जीवनं कुर्बती।।५९ ।।

श्रेष्ठ हासरति समन्वित मोहनाद्भुत विलासरासोत्सव में विचित्र ताण्डवनाट्य प्रकटन के द्वारा श्रमहेतु जिनका गण्डस्थल धर्मसिक्त हुआ है, पादसेवन से कृतार्थप्राणा मैं कब उन नागरीमणि एवं रसिकशेखर का भजन आनन्द से करूँगा? ।।५९ ।।

वृन्दारण्य निकुञ्जमजुलगृहेष्वात्मेश्वरी मार्गयन्,
हा राधे सविदग्ध दर्शितपथं किं यासि नेत्यालपन्।
कालिन्दी सलिले च तत्कुचतटी कस्तुरिका पङ्किले,
स्नायं स्नायमहो कुदेहजमलं जह्यात्कदानिर्मलः।।६० ।।

श्रीवृन्दावनीय मजुलनिकुञ्ज गृह में आत्मेश्वरी को अन्वेषण करते-करते, हा राधे ! सविदग्ध दर्शन पथ से क्यों नहीं जाती रहती हैं ? इस प्रकार रहस्यालाप करते-करते श्रीराधा के वक्षोज प्रान्तभाग लग्ना कस्तूरी पङ्क से पङ्किल श्रीयमुना में स्नान करते-करते निर्मल होकर मैं कब कुदेहजमालिन्य का त्याग करूँगी? ।।६० ।।

पादस्पर्शरसोत्सवं प्रणतिभिर्गोविन्दमिन्दीवर,
श्यामं प्रार्थयितुं सुमजुलरहः कुञ्जांश्चसम्मार्जितुम्।
मालाचन्दन गन्धपूर रसवत्ताम्बूल सत्पानका,
न्यादातुञ्च रसैकदायिनि तव प्रेष्या कदा स्यामहम् ।।६१ ।।

हे रसैकदायिनी ! प्रणति के द्वारा आपका पादस्पर्श जिनका रसोत्सव है, उन इन्दीवर श्याम श्रीगोविन्द की प्रार्थना करने, सुन्दर रहः कुञ्ज समूह की सम्मान करने एवं माला, चन्दन, गन्धपात्र, सुरसाल ताम्बुल, स्वादु पानीय द्रव्यादि विलासोपकरण समूह का आनयन केलिकुंज में करने के लिए मैं कब आपकी प्रेष्या-प्रेरणयोग्या दासी बनूँगी ? ।।६१ ।।

लावण्यामृतवार्त्तया जगदिदं संप्लावयन्तीशर-
द्राका चन्द्रमनन्तमेव वदनज्योत्स्नाभिरातन्वती।
श्रीवृन्दावन कुञ्जमञ्जु गृहिणी काप्यस्ति तुच्छामहो,
कुर्बाणाखिलसाध्यसाधनकथां दत्त्वा स्वदास्योत्सवम्।।६२ ।।

अहो ! लावण्यामृत के द्वारा जो इस जगत् को संप्लावित कर रही है एवं जिनकी वदनचन्द्रिका अनन्त शारद पूर्ण शशि की सुषमा का विस्तार कर रही है, उन श्रीवृन्दावन की मञ्जुकुञ्जगृहिणी श्रीराधा, अखिल साध्यसाधन कथा को तुच्छ कर निज दास्योत्सव प्रदान कर विराजित हैं।।६२ ।।

दृष्ट्वा यत्र क्वचन विहितामेड्ने नन्दसुनोः,

प्रत्याख्यानच्छलत उदितोदारसङ्केतदेशा।
धूर्तेन्द्र त्वद्धयमुपगता सा रहोनीपवाट्यां,
नैका गच्छेत् कितवकृतमित्यादिशेत् कर्हि राधा।।६३॥

हे कितब ! हे धूर्त्त शिरोमणि ! नन्दनन्दन! निज अपांगदृष्टि के द्वारा संकेत स्थान को सूचित करने से, उसका प्रत्याख्यान कर उदार संकेत स्थान का निर्देश करती है, वह श्रीराधा निभृत कदम्ब वाटिका में आपकी वञ्चना की आशंका से एकक नहीं जा सकती हूँ, अतएव अनुचरी रूप में कब मुझको साथ जाने का आदेश करेंगी ? ॥६३॥

सा भ्रूनतनचातुरी निरुपमा सा चारुनेत्राञ्चले,
लीलाखेलन चातुरी वरतनोस्तादृग्वचोचातुरी।
सङ्केतागमचातुरी नवनव क्रीड़ाकलाचातुरी,
राधायाजयतां सखीजन परीहासोत्सवे चातुरी॥६४॥

आहा ! श्रीराधिका की वह निरूपमा भ्रूनर्तन चातुरी, चारु अपांग दर्शन चातुरी, वरतनु श्रीकृष्ण की वाग्वैदग्धी की भाँति वचन चातुरी, सङ्केतागम चातुरी, नव नवकेलिकला चातुरी एवं सखीगण के साथ परिहासोत्सव में जो चातुरी वह सर्वोत्कर्ष से विराजित हो॥६४॥

उन्मीलन्मिथुनानुराग गरिमोदार स्फुरन्माधुरी,
धारासारधुरीण दिव्यललितानङ्गोत्सवैः खेलतोः।
राधामाधवयोः परं भवतु नश्चित्तेचिरातिस्पृशोः,
कौमारे नवकेलिशिल्पलहरी शिक्षादिदीक्षारसः।।६५॥

जो उन्मीलित युगलानुराग गरिमा की देदीप्यमाना माधुरीधारासारधुरन्दर दिव्य ललितकन्दर्प उत्सव के साथ नित्य क्रीडाशील हैं, अथच चित्त में चिर खेदान्वित हैं, उन श्रीराधामाधव के कौमारकाल में भी जो नित्याभिनव केलिकला चातुर्य लहरी की शिक्षादि दीक्षारस है, वह हम सभी के लिए परावधिस्वरूप हो॥६५॥

कदा वा खेलन्तौ ब्रजनगर वीथिषु हृदयं,
हरन्तौ श्रीराधा ब्रजपति कुमारौ सुकृतिनः।
अकस्मात् कौमारे प्रकट नवकैशोर विभवौ,
प्रपश्यन् पूर्णः स्यां रहसि परिहासादि निरतौ॥६६॥

जो सुकृतिजनों के हृदय का हरण कर ब्रजनागर के पथ-पथ में क्रीड़ा करते-रहते हैं, अकस्मात उस कौमारकाल में ही जिनके नवकैशोर विभव प्रकटित होने से रहः प्रदेश में जाकर परस्पर परिहासादि लीलाविहार में प्रवृत्त हो गये, उन श्रीराधा ब्रजेन्द्रनन्दन के दर्शन कर मैं कब कृतार्थ हो जाऊँगा ? ॥६६॥

धर्म्मिल्लं ते नवपरिमलैरुल्लसत्फुल्लमल्ली,
मालं भालस्थलमपि लसत्सान्द्रसिन्दूरबिन्दु।
दीर्घापाङ्गच्छविमनुपमां चारुचन्द्रांशुहासं,
प्रेमोल्लासं तव तु कुचयो र्द्वन्द्वमन्तः स्मरामि ॥६७॥

हे श्रीराधे ! आपके नव परिमल समन्वित प्रफुल्लमल्लिका मालावेष्टित धर्मिल्ल, निविड़ सिन्दूरबिन्दु परिशोभित ललाट, अनुपम दीर्घापाङ्गच्छबि, प्रेमोल्लासपूर्ण चारुचन्द्रांशु हास्य एवं वक्षोज युगल की रहस्यता का स्मरण करता हूँ॥६७॥

लक्ष्मीकोटि विलक्षलक्षण लसल्लीला किशोरीशतै-
राराध्यं ब्रजमण्डलेऽतिमधुरं राधाभिधानं परम्।
ज्योतिः किञ्चन सिञ्चदुज्ज्वलरस प्रारभावमाविर्भव-
द्राधे चेतसि भूरिभाग्यविभवैः कस्याप्यहोजृम्भते॥६८॥

जिनकी लीला में कोटि लक्ष्मी के लक्षण निचय शोभित हैं, उन शत-शत ब्रजकिशोरीगण के द्वारा सेवनीय एवं ज्योतिः सिञ्चनकारी उज्ज्वलरस का प्रागभाव स्वरूप, अति मधुर श्रेष्ठ श्रीराधा नाम, ब्रजमण्डल में किसी एक भाग्यवान् के ध्यानविभावित चित्त में अनेक सौभाग्य सम्पद द्वारा विस्तार प्राप्त हो रहा है॥६८॥

तज्जीयान्नवयौवनोदयमहालावण्यलीलामयं,
सान्द्रानन्दघनानुरागघटितश्रीमूर्तिसम्मोहनम्।
वृन्दारण्य निकुञ्जकेलि ललितं काश्मीरगौरच्छवि,
श्रीगोविन्द इव ब्रजेन्द्र गृहिणी प्रेमैकपात्रंमहः॥६९॥

जों नवयौवनोदय से महालावण्य लीलामय हैं, जो सान्द्रानन्दघन श्रीकृष्ण के अनुरागघटित श्रीमूर्ति का भी सम्मोहनकारिणी है, जो श्रीवृन्दावनीय निकुंजकेलि में सुन्दर एवं श्रीगोविन्द की भाँति ब्रजेन्द्र गृहिणी के एकमात्र प्रीतिपात्र हैं, वे कुंकुम गौरच्छबि श्रीराधारूप माधुर्य्य लययुक्त हों।॥६९ ॥

प्रेमानन्द रसैकवारिधि महाकल्लोलमालाकुला,
व्यालोलारुणलोचनाञ्चल चमत्कारेण सञ्चिन्वती।
किञ्चित् केलिकलामहोत्सवमहो वृन्दाटवी मन्दिरे,
नन्दत्यद्भुत कामवैभवमयी राधा जगन्मोहिनी।॥७०॥

आहा ! जो प्रेमानन्दरस वारिधि श्रीकृष्ण की महाकल्लोल माला से आकुलित होकर चंचलारुण नयनापांग चारुता के द्वारा केलिकला महोत्सव का आयोजन करती हैं, वह अद्भुत कामवैभवमयी जगन्मोहिनी श्रीराधा श्रीवृन्दावन के निकुंज मन्दिर में आनन्दित हैं॥७०॥

वृन्दारण्य निकुञ्जसीमनि नवप्रेमानुभावभ्रमद्,
भ्रूभङ्गीलवमोहित ब्रजमणिभक्तैक चिन्तामणिः।
सान्द्रानन्दरसामृतस्त्रवमणिः प्रोदामविद्युल्लता,
कोटिज्योतिरुदेति कापि रमणीचूड़ामणिर्मोहिनी॥७१॥

ब्रजमणि श्रीकृष्ण जिनके नवप्रेमानुभाव चंचल भ्रूभंग लव के द्वारा विमोहित हैं। जो भक्तैक चिन्तामणि एवं निविड़ आनन्द रसामृत की निर्झर मणिस्वरूपा हैं, जिनकी अंगकान्ति-उद्दीप्त कोटि विद्युल्लता की भाँति है, वे भुवनमोहिनी रमणी चूडामणि श्रीवृन्दावन की निकुंज सीमा में आविर्भूत हैं।॥७१॥

लीलापाङ्गतरङ्गितैरुदभवन्नेकैकशः कोटिशः,
कन्दर्पाः पुरुदर्पटङ्कृत महाकोदण्डविस्फारिणः।

तारुण्य प्रथम प्रवेश समये यस्या महामाधुरी,
धारानन्तचमत्कृता भवतु नः श्रीराधिका स्वामिनी ॥७२ ॥

जिनकी वय:सन्धि के समय में लीलापांग नर्त्तनमात्र से कोटि-कोटि महाकोदण्ड विस्फारी कन्दर्प की सृष्टि होती है, वे महामाधुरी धारानन्त चमत्कृता श्रीराधिका हमारी स्वामिनी होवें ॥७२ ॥

यत् पादाम्बुरुहैकरेणुकणिकां मूर्ध्नानिधातुं नहि,
प्रापुर्ब्रह्मशिवादयोऽप्यधिकृतिं गोपेक्यभावाश्रयाः ।
सापि प्रेमसुधारसाम्बुधिनिधी राधापि साधारणी,
भूताकालगतिक्रमेण वलिना हे दैव तुभ्यं नमः ।।७३ ॥

ब्रह्मशिव सनकादि भी जिनकी चरणाम्बुज की रेणुकणा को मस्तक पर धारण करने का अधिकार प्राप्त नहीं कर पाते हैं, आश्चर्य की बात है, बलवान कालगति क्रम से वह प्रेमामृत रसाम्बुधिनिधि श्रीराधा, गोपीभावाश्रित साधकगणों के निकट साधारण रूप से उपलब्ध हैं, अतएव हे देवि तुम्हें नमस्कार है।।७३ ॥

दूरे स्निग्धपरम्परा विजयतां दूरे सुहृन्मण्डली,
भृत्याः सन्तु विदूरतो ब्रजपतेरन्यः प्रसङ्गः कुतः ।
यत्र श्रीवृषभानुजा कृतरतिः कुञ्जोदरे कामिना,
द्वारस्था प्रियकिङ्करी परमहं श्रोष्यामि काञ्चिध्वनिम् ॥७४ ॥

अन्य की बात ही क्या है, जहाँ से श्रीकृष्ण के स्नेहपात्रगण एवं तदीय सुहृद्गण हटकर रहते हैं एवं उनके भृत्यगण भी अति दूरस्थ ही रहते हैं, उस कुंजाभ्यन्तर में वृषभानुनन्दिनी श्रीराधा, कामी श्रीकृष्ण के साथ केलिविलास में प्रवृत्त होने से प्रिय किंकरी मैं कब कुंजद्वार में रहकर श्रेष्ठ कांचीध्वनि सुनूँगी।।७४ ॥

गौराङ्गे म्रदिमास्मिते मधुरिमा नेत्राञ्चले द्राघिमा,
वक्षोजे गरिमा तथैव तनिमा मध्ये गतौ मन्दिमा ।
श्रोण्याञ्च प्रथिमाभ्रुवोः कुटिलिमाबिम्बाधरे शोणिमा,
श्रीराधे हृदि ते रसेन जड़िमा ध्यानेऽस्तु मे गोचरः ।।७५ ।।

हे श्रीराधे ! आपके गौरांग में जो कोमलता एवं मृदुहास्य में जो मधुरिमा, नेत्रांचल में जो दीर्घता, वक्षोज में जो स्थूलता तथा कटिदेश में जो कृशता, पादन्यास में धीरता नितम्ब में पृथुलता, भ्रूद्वय में कुटिलता, बिम्बाधर में रक्तिमा, हृदय में रस श्रीकृष्ण के द्वारा जो जडिमा है, वह मेरा ध्यान गोचर हो।।७५ ॥

प्रातः पीतपटं कदा व्यपनयाम्यन्यांशुकास्यार्पणात्,
कुञ्जे विस्मृत कञ्चुकीमपि समानेतुं प्रधावामि वा ।
बध्नीयां कबरी युनज्मि गलितां मुक्तावलीमञ्जये,
नेत्रे नागरि रङ्गकैश्च पिदधाम्यङ्गवणं वा कदा ।।७६ ॥

हे नागरि ! भ्रम से श्रीकृष्ण के उत्तरीय ग्रहण करने से मैं कब निशावसान के समय उस पीतवसन का अपसारण आपके अंग से करूँगी। भूल से कुंज में कंचुलिका छोड़ आने से मैं कब उसे लाने के लिए दौड़कर जाऊँगी ? मैं कब जड़ाबन्ध दूंगी, कब टूटी हुई मुक्तामाला को फिर से गूदूंगी, कब नयनों में अंजन प्रदान करूँगी एवं कब मैं अंग क्षत को सिन्दूर, कस्तुरी आदि से ढकँगी? ॥७६ ।।

यद् वृन्दावनमात्र गोचरमहो यन्नश्रुतीकं शिरो-
प्यारोढुं क्षमते न यच्छिवशुकादीनान्तु यद् ध्यानगम्।
यत् प्रेमामृतमाधुरी रसमयं यन्नित्य कैशोरकं,
तद्रूपं परिवेष्टुमेव नयनं लोलायमानं मम।।७७॥

अहो ! जो केवल श्रीवृन्दावन में ही दर्शनीय हैं, वेद भी जिनका वर्णन करने में समर्थ नहीं हैं, जो शिवशुकादि संयतचित्तगण के ध्यानगम्य नहीं हैं एवं जो प्रेमामृत माधुरी रसमय हैं, उस नित्य कैशोररूपमाधुर्य्य के आस्वादन के निमित्त मेरे नयन चंचल हो रहे हैं।।७७॥

धर्माद्यर्थ चतुष्टयं विजयतां किं तद् वृथा वार्त्तया,
सैकान्तेश्वर भक्तियोग पदवी त्वारोपिता मूर्धनि।
या वृन्दावन सीमनि काचन घनाश्चर्या किशोरिमणि,
स्तत् कैङ्कूर्या रसामृतादिह परं चित्ते न मे रोचते॥७८ ॥

धर्मार्थ काममोक्ष चतुर्वर्ग की जय हो, उसकी वृथा वार्ता से आवश्यकता क्या है ? एकान्त ईश्वर भक्तियोग की जो पद्धति अथवा ईश्वर भक्तियोग के द्वारा भक्तसंज्ञा मिलती है उसको भी मैं मस्तक पर रखता हूँ। श्रीवृन्दावन की सीमा में एक अनिर्वचनीय घनाश्चर्यरूप किशोरीमणि अवस्थित हैं, उनके किंकरीत्व रूपरसामृत को छोड़कर मेरे चित्त में अपर किसी का श्रेष्ठत्व बोध नहीं है।।७८॥

प्रेम्णः सन्मधुरोज्ज्वलस्य हृदयं शृङ्गार लीलाकला,
वैचित्री परमावधिर्भगवतः पूज्येव कापीशता।
ईशानी च शची महासुखतनुः शक्तिः स्वतन्त्रा परा,
श्रीवृन्दावननाथ पट्ट महिषी राधैव सेव्या मम॥७९ ॥

जो अप्राकृत मधुर पारकीय प्रेम की प्राणस्वरूपा, सम्भोग लीलाकला वैचित्र्य की परावधि, भगवान् महाविष्णु की भी पूज्यनीया, ईश्वरी, ईशानी, शची, महासुख तनु शक्तिस्वरूपिणी होकर भी जो स्वतन्त्रा हैं, उन पराप्रकृति श्रीवृन्दावननाथ श्रीकृष्ण की पट्टमहिषी श्रीराधा ही मेरी एकमात्र आराध्या हैं।।७९॥

राधा दास्य मपास्य यः प्रयतते गोविन्द सङ्गाशया,
सोऽयं पूर्णसुधारुचेः परिचयं राकां विना काङ्क्षति।
किञ्च श्यामरति प्रवाहलहरी बीजं न ये तां विदु-
स्ते प्राप्यापि महामृताम्बुधिमहो बिन्दुं परं प्राप्नुयुः।।८०॥

जो जन श्रीराधा की दास्यता को छोड़कर श्रीकृष्ण संग प्राप्ति की चेष्टा करते हैं, वे पूर्णिमा को छोड़कर पूर्णचन्द्र परिचय की आकांक्षा करते हैं, किन्तु श्रीकृष्ण प्रीति प्रवाह के उत्पत्तिस्थानस्वरूप श्रीराधा को नहीं जानते हैं, अहो ! वह महासमुद्र को प्राप्तकर भी केवल बिन्दुमात्र ही लाभ करते हैं।।८० ॥

कैशोराद्भुतमाधुरीभरधुरिणांगच्छविं राधिका,
प्रेमोल्लासभराधिका निरवधि ध्यायन्ति ये तद्धियः।
त्यक्ताः कर्मभिरात्मनैव भगवद्धर्मेऽप्यहो निर्ममाः,
सर्वाश्चर्यगतिंगता रसमयी तेभ्योमहद्भ्यो नमः।।८१॥

अहो ! मन से भी काम्यकर्म को त्यागकर, ऐसा कि भगवद्विधान सम्मताश्रमधर्म के प्रति ममता न रखकर आविष्ट चित से जो केवल अद्भुत कैशोरमाधुरी भूषितांगच्छवि प्रेमोल्लासभराधिका श्रीराधिका का ध्यान निरवधि करता है, वह सर्वआश्चर्य एकरसमयी गति को प्राप्त करता है, उन महद व्यक्ति को नमस्कार है।।८१॥

लिखन्ति भुजमूलतो न खलु शङ्खचक्रादिकं,
विचित्र हरिमन्दिरं न रचयन्ति भालस्थले।
लसत्तुलसिमालिकां दधति कण्ठपीठे नवा,
गुरोर्भजन विक्रमात् क इइ ते महाबुद्धयः॥८२॥

अनन्य भजननिष्ठा से जो जन निज बाहुमूल में शङ्ख, चक्रादि को धारण नहीं करते हैं एवं ललाट में विचित्र श्रीहरिमन्दिर तिलक रचना नहीं करते, किम्वा कण्ठ में श्रीतुलसीमाला भी धारण नहीं करते हैं, वे इस जगत् में महा अबुद्धिजन कौन हैं ? ॥८२॥

कर्माणि श्रुति बोधितानि नितरां कुर्वन्तु कुर्वन्तु मा,
गूढाश्चर्य्यरसाः स्त्रगादिविषयान् गृह्णन्तु मुञ्चन्तु वा,
कैर्वा भाव रहस्यपारगमतिः श्रीराधिका प्रेयसः,
किञ्चिज्ज्ञैरनुयुज्यतां वहिरहो भ्राम्यद्भिरन्यैरपि।।८३॥

विशुद्ध ब्रजभक्ति रसाश्रित भक्तगण श्रुत्युक्त कर्मकाण्ड का अनुष्ठान सर्वत्र करे अथवा न करे, स्त्रक् चन्दनादि विषय समूह अर्थात् भोग सुख के उपकरणादि का ग्रहण करे अथवा त्याग करे, उससे उनकी कोई हानि नहीं है, अहो ! अतएव तादृश श्रीराधाकान्त का भावरहस्य निष्णात व्यक्ति अल्पज्ञ, बहिर्मुख, काम्यकर्मी ज्ञानी, योगीजनादि किसके साथ मिलित होंगे? वे सब अन्य किसी के सदृश नहीं होंगे॥८३॥

अलं विषयवार्तया नरककोटि वीभत्सया,
वृथा श्रुति कथा श्रमो वत विभेमि कैवल्यतः।
परेश भजनोन्मदा यदि शुकादयः किं ततः,
परंतु मम राधिका पदरसे मनो मज्जतु।।८४॥

कोटि नरक की अपेक्षा अति घृणित विषयवार्ता भी व्यर्थ हैं, वेदाध्ययन श्रम भी वृथा है। अहो ! मोक्ष भी अत्यन्त भयानक है, यहाँ तक कि श्रीहरि भजनोन्मत्त शकादि की भाँति जीवन्मुक्तावस्था से भी कोई प्रयोजन नहीं है, किन्तु मेरा मन केवल श्रीराधिका के पद रस में निमग्न हो॥८४॥

तत् सौन्दर्यं सच नवनवो यौवनश्री प्रवेशः,
सा दृग्भङ्गी सच घनरसाश्चर्यवक्षोज कुम्भः।
साऽयं बिम्बाधरं मधुरिमा तत्स्मितं साच वाणी,
सेयं लीलागतिरपि न विस्मर्य्यते राधिकायाः॥८५॥

मैं श्रीराधिका का वह सौन्दर्य्य, वयःसन्धि में यौवनश्री का प्रवेश, नयनभंगिमा, रसघन श्रीकृष्ण का आश्चर्यकारक वक्षोज युगल, बिम्बाधर मधुरिमा, मृदुहास्य, मधुरवाक्य एवं चंचल पादविन्यास को भूल नहीं सकता हूँ।।८५॥

यल्लक्ष्मीशुकनारदादि परमाश्चर्यानुरागोत्सवैः,

प्राप्तत्वत् कृपयैव हि ब्रजभृतां तत्तत्किशोरीगणैः।
तत् कैङ्क-मनुक्षणाद्धुतरसं प्राप्तुं धृताशे मयि,
श्रीराधे नवकुञ्जनागरी कृपादृष्टिं कदा दास्यसि ॥८६॥

हे नवकुञ्जनागरि श्रीराधे ! लक्ष्मी शकनारदादि के परमाश्चर्यैरूप अनुरागोत्सवमयी ब्रजकिशोरीगणों ने आपकी कृपा से जो कुछ प्राप्त किया है, वह अनुक्षण अद्भुत रसयुक्त आपका कैंकर्य दास्य के निमित्त मैं अभिलाषी हूँ, कब आप मेरे प्रति दृक्पात करेंगी ? ।।८६।।

लब्ध्वा दास्यं तदति कृपया मोहनस्वादितेन,
सौन्दर्य श्रीपदकमलयो ालनैः स्वापिताया:।
श्रीराधाया मधुर मधुरोच्छिष्ट पीयूषसारं,
भोज भोज नवनव रसानन्दमग्न कदा स्याम् ।।८७॥

सौन्दर्य श्रीपदकमल सम्वाहन के द्वारा निद्रिता श्रीराधिका की कृपा से दास्यता प्राप्तकर श्रीनन्दनन्दन के आस्वादन से मधुरादपि मधुर जो श्रीराधा का भोजनावशेष पीयूषसार है उसे भोजन करते-करते मैं कब नव-नव रसानन्द में निमग्न हो जाऊँगी ? ॥ ८७॥

यदि स्नेहाद्राधे दिशसि रतिलाम्पट्य पदवीं,
गतं मे स्वप्रेष्ठं तदपि मम निष्ठां शृणु यथा।
कटाक्षैरालोके स्मित सहचरैर्जात पुलकं,
समाश्लिष्याम्युच्चैरथ च रसये त्वत् पदरसम्॥८८॥

हे श्रीराधे ! आप रतिलाम्पट्य प्राप्त प्रियजन के पादसम्बाहन करने के लिए आदेश करने से उस समय में मेरी जो निष्ठा है, उसको मैं प्रकट करता हूँ। श्रवण करो, मैं आपकी मृदुहास्ययुक्त कटाक्ष के आलोक से उन प्रियजन को आपके पादस्पर्श से रोमांचित कलेवर देखकर आपके पादपद्म रस का आस्वाद मैं कब ग्रहण करूँगी।८८॥

कृष्णः पक्षो नवकुवलयं कृष्णसारस्तमालो,
नीलाम्भोद स्तव रुचिपदं नाम रूपैश्च कृष्णा।
कृष्णे कस्मात्तव विमुखता मोहन श्याम मूर्त्ता,
वित्युक्त्वा त्वां प्रहसितमुखीं किं नु पश्यामि राधे।।८९॥

कृष्णपक्ष, नीलकमल, कृष्णसार तमाल, नवीन मेघ, कृष्ण 'यमुना' जिनके नाम के सादृश्य हेतु आपको रुचिप्रद हैं, उन मोहनश्याममूर्ति श्रीकृष्ण में किस लिए आपकी विमुखता है ? हे श्रीराधे ! यह कहकर क्या मैं आपका प्रफुल्लमुखी दर्शन नहीं करूँगी? ॥८९॥

लीलापाङ्ग तरङ्गितैरिवदिशोनीलोत्पल श्यामला,
दोलायत्कनकाद्रि मण्डलमिव व्योम स्तनस्तन्वतीम्।
उत्फुल्लस्थल पङ्कजामिव भुवं रासे पदन्यासतः,
श्रीराधामनुधावतीं ब्रजकिशोरीणां घटां भावये॥९०॥

कृष्णाश्रम गोकुल लालबन्दी, सर्लाही, नेपाल, फोन-९८४४९४३६०

जो सब ब्रजललनागण निज लीलापांग तरंग के द्वारा दिक् समूह को नीलोत्पल सदृश श्यामल स्तन द्वारा आकाश को दोलायमान् कनकाचल के सदृश सुन्दर एवं पदविन्यास के द्वारा श्रीरासमण्डल भूमि को उत्फुल्लस्थल पंकज की भाँति सुशोभित कर रही हैं, उन श्रीराधा की अनुगामिनी ब्रजकिशोरी घटा की भावना मैं कर रही हूँ।।९०॥

दृशौत्वयि रसाम्बुधौ मधुरमीनवद् भ्राम्यतं,
स्तनौ त्वयि सुधासरस्यहह चक्रवाकाविव।
मुखं सुरतरङ्गिणि त्वयिविकासिहेमाम्बुजं,
मिलन्तु मयि राधिके तव कृपातरङ्गच्छटाः॥९१॥

अहो श्रीराधे ! आपके नयनयुगल रससागर में मधुरमीन के सदृश भ्रमणरत हैं, आपके स्तनयुगल सुधासरोवर में चक्रवाक मिथुन की भाँति हैं एवं हे सुरतरंगिणी ! आपके वदन प्रफुल्लस्वर्ण कमल की भाँति शोभित हैं, आपकी कृपातरंगच्छटा: मेरे प्रति पतित हो॥९१॥

कान्ताढ्याश्चर्य कान्ताकुलमणिकमला कोटिकाम्यैकपादा-
म्भोज भ्राजन्नखेन्दुच्छविलवविभवा काप्यगम्या किशोरी।
उन्माद प्रवृद्ध प्रणय रसमहाम्भोधि गम्भीरलीला,
माधुर्योज्जृम्भिताङ्गी मयि किमपि कृपारङ्गमङ्गी करोतु ॥९२॥

उन्मर्याद एवं प्रबुद्ध प्रणयरसरूप महाम्भुधि की गम्भीर लीला माधुर्य से जिनका अंग उल्लसित है, जिनके पदकमल की शोभा एकमात्र नखचन्द्र की कान्तिकणा कोटि कमला का काम्य विभव है एवं जो कान्ता श्रीकृष्ण के साथ सम्मिलिता हैं, आश्चर्यरूपा ब्रजकिशोरीगण की शिरोमणिस्वरूपा ब्रह्मा प्रभृति के वाक्य मन की अगोचरा वह कौन एक किशोरी मुझे कृपा कर अंगीकार करें।।९२॥

कलिन्दगिरि नन्दिनी पुलिन मालती मन्दिरे,
प्रविष्ट वनमालिना ललित केलि लोलीकृते।
प्रतिक्षण चमत्कृताद्भुत रसैक लीलानिधे,
निधेहि मयि राधिके निजकृपा तरङ्गच्छटाम्॥९३॥

हे श्रीयमुनापुलिनवर्ती मालतीकुंज मन्दिर में प्रविष्ट वनमाली की ललित केलिविलास द्वारा चंचलीकृते ! हे प्रतिक्षण मनोहर रसस्वरूप श्रीकृष्ण की एकमात्र लीलानिधिस्वरूपे ! हे श्रीराधिके ! निज कृपातरंगच्छटा मेरे प्रतिनिहित करो॥९३॥

यस्यास्ते वत किङ्करीषु बहुशश्चाटुनि वृन्दाटवी,
कन्दर्पः कुरुते तवैव किमपि प्रेप्सुः प्रसादोत्सवम्।
सान्द्रानन्द घनानुराग लहरी निस्यन्दपादाम्बुज,
द्वन्द्वे श्रीवृषभानुनन्दिनि सदा वन्दे तव श्रीपदम्।।९४॥

हे वृषभानुनन्दिनी श्रीराधे ! आपका प्रसादोत्सव लाभेच्छु एक वृन्दावन कन्दर्प श्रीकृष्ण आपकी किंकरीगण के समीप में हर्ष से बहुश: प्रार्थना करते रहते हैं, मैं आपके उन श्रीचरण-कमल की वन्दना करूँ॥९४॥

जज्जापः सकृदेव गोकुलपतेराकर्षकस्तत्क्षणाद्,

यत्र प्रेमवतां समस्त पुरुषार्थेषु स्फुरेत्तुच्छता।
यन्नामाङ्कित मन्त्र जापन परः प्रीत्या स्वयं माधवः,
श्रीकृष्णोऽपि तदद्भुतं स्फुरतु मे राधेति वर्णद्वयम्॥९५॥

जिसका उच्चारण एकबार करने से ही नन्दनन्दन श्रीकृष्ण भी तत्क्षणात् आकृष्ट होते हैं, जिनमें प्रीति सम्पन्न होने से समस्त पुरुषार्थ में तुच्छता उपस्थित होती है, स्वयं माधव श्रीकृष्ण भी जिनके नामांकित मन्त्र का जप प्रीतिपूर्वक करते रहते हैं, वह अद्भुत 'राधा' यह वर्णद्वय मेरी रसना में स्फुरित हो॥९५॥

कालिन्दीतट कुञ्जमन्दिरगतो योगीन्द्रवत् यत् पद,
ज्योतिर्ध्यान परः सदा जपति या प्रेमाश्रुपूर्णोहरिः।
केनाप्यद्भुतमुल्लसद्रतिरसानन्देन सन्मोहितः,
सा राधेति सदा हृदि स्फुरतु मे विद्यापरा व्यक्षरा॥९६॥

श्रीयमुनातटवर्ती कुञ्ज मन्दिर में श्रीकृष्ण योगीन्द्र की भाँति जिनके पदनखज्योति के ध्यान परायण होकर प्रेमाश्रु से अभिषिक्त होकर जिसका जप सर्वदा करते रहते हैं, उन अनिर्वचनीय अद्भुत उल्लासकर रतिरसानन्द सम्मोहिता 'राधा' यह दो अक्षरयुक्ता पराविद्या सर्वदा मेरे हृदय में स्फुरित हो॥९६॥

देवानामथ भक्तमुक्त सुहृदामत्यन्त दूरं च यत्,
प्रेमानन्दरसं महासुखकरं चोच्चारितं प्रेमतः।
प्रेम्णाकर्णयते जपत्यथमुदा गायत्यथालिद्वयं,
जल्पत्यश्रुमुखो हरिस्तदमृतं राधेति मे जीवनम्॥९७॥

जो देवता, भक्त, मुक्त, सुहृद्गणों के विदूरवर्ती हैं, जो प्रेमानन्दरस स्वरूप हैं, स्वयं श्रीकृष्ण जिसका श्रवण प्रेम से करते हैं, जप भी करते हैं, सखीगणों के मध्य में आनन्द से गाते रहते हैं, प्रेमाश्रुपूर्ण वदन से जल्पना करते हैं, वह श्रीराधानामामृत ही मेरा जीवन होवे।।९७॥

या वा राधयति प्रियं ब्रजमणिं प्रौढ़ानुरागोत्सवैः,
संसिध्यन्ति यदाश्रयेण हि परं गोविन्द सख्युत्सुकाः।
यत् सिद्धिःपरमापदैकरसवत्याराधनान्ते नु सा,
श्रीराधाश्रुति मौलिशेखर लतानाम्नी मम प्रीयताम्॥९८॥

जो प्रौढ़ानुरागोत्सव के द्वारा प्रियतम ब्रजमणि श्रीकृष्ण का भजन सर्वदा करती हैं, जो गोविन्द सख्युत्सव हैं, वह भी जिनके श्रीचरणाश्रयमात्र से परम कृतार्थ हैं, जो एकरसवती हैं एवं जिनकी आराधना से परमा सिद्धिलाभ होता है, वे श्रुतिमौलिशेखर लतानाम्नी श्रीराधा क्या मुझ पर कृपा करेंगी॥९८॥

गाने कोटितड़िच्छवि प्रविततानन्दच्छवि श्रीमुखे,
बिम्वोष्ठे नव विद्रुमच्छविकरे सत्पल्लवैकच्छवि।
हेमाम्भोरुहकुड्नलच्छविकुचद्वन्द्वेऽरविन्देक्षणं,
वन्दे तन्नवकुञ्जकेलि मधुरं राधाभिधानं महः।।९९॥

जिनके तन में कोटि विद्युत् की छबि, श्रीमुख में प्रवर्द्धित आनन्दच्छबि, बिम्बौष्ठे नव विद्रुमच्छबि, कर में अश्वत्थादि सत् पल्लव की च्छबि, वक्षोजयुगल में स्वर्णकमल कलिका की च्छबि हैं, उन फुल्लेन्दीवर नेत्रा, नवकुंजकेलि मधुरा श्रीराधा के रूपमाधुर्य्य की वन्दना करता हूँ।।९९॥

मुक्तापङ्क्ति प्रतिमदन्ताना चारुबिम्बाधरोष्ठी,
मध्ये क्षामा नवनवरसावर्तगम्भीर नाभिः।
पीनश्रोणिस्तरुणिम समुन्मेष लावण्यसिन्धु,
वैदग्धीनां किमपि हृदयं नागरी पातु राधा॥१००॥

मुक्तापङक्ति प्रतिमदन्ताना, चारुबिम्बाधरौष्ठी. क्षीणमध्या, नवनवरसावर्त गम्भीरनाभि, स्थूलकटि, तारुण्य समुन्मेषित लावण्यसिन्धु, वैदग्धी की हृदयस्वरूपा नागरी श्रीराधा हमारी रक्षा करें।१००॥

स्निग्धा कुञ्जित नीलकेशि विदलद् बिम्बोष्ठी चन्द्रानने,
खेलत् खञ्जन गञ्जनाक्षि रुचिमन्नासाग्रमुक्ताफले।
पीनश्रोणितनुदरिस्तनतटीवृत्तच्छटात्यद्भुते,
श्रीराधे भुजवल्लि चारुवलये स्वं रूपमाविष्कुरु ।।१०१॥

हे स्निग्धा कुञ्चितनीलकेशी ! हे विदलितबिम्बाधरौष्ठि ! हे चन्द्रवदने ! हे क्रीडाशील खञ्जन गञ्जनाक्षि ! हे देदीप्यमान नासाग्रमुक्ताफले! हे पीनश्रोणि ! हे क्षीणोदरि ! हे स्तनतटीवृत्तछटाद्भुते ! हे श्रीभुजवल्लि चारुवलये ! हे श्रीराधे ! आप स्वरूप को प्रकट करें।।१०१॥

लज्जान्तः पटमारचय्य रचितस्माय प्रसूनाजलौ,
राधाङ्गे नवरङ्गधामनि ललितप्रस्तावने यौवने।
श्रोणी हेमवरासने स्मरनृपेनाध्यासिते मोहनं,
लीलापाङ्ग विचित्र ताण्डव कलापाण्डित्य मुन्मीलति॥१०२॥

जिसमें कन्दर्पराजाधिष्ठित श्रोणीरूप हेमवरासन तथा ललित यौवन शोभित है एवं जो अद्भुत प्रसूनाजली विरचित नवरस की लीलाभूमि है, श्रीराधा के उस श्रीअंगों में सुमोहन लीलापांग विचित्र ताण्डवकला पाण्डित्य, लज्जा यवनिका की सृष्टि पुनः पुनः करके उन्मीलित है॥१०२॥ जिसमें लावण्य की चमत्कृति तथा कृष्णमनोहर नववयः सन्धि का माधुर्य शोभित है, जिसमें श्रीराधाश्यामसुन्दर की केलिकला विलास लहरी चातुर्य विद्यमान है, जिसमें सर्वाश्चर्य्यत्व परिस्फुट है, जिसमें किंचित्मात्र

नो किञ्चित् कृतमेव यत्र न नुतिर्नागो नवा सम्भ्रमो,
राधामाधवयोः स कोऽपि सहजः प्रेमोत्सवः पातु वः।।१०३॥
येषां प्रेक्षां वितरति नवोदारगाढ़ानुरागा-
न्मेघश्यामोमधुरमधुरानन्दमूर्ति मुकुन्दः।
वृन्दाटव्यां सुमहिम चमत्कार कारिण्यहो किं,
तानि प्रेक्षेऽद्भुत रसनिधानानि राधा पदानि॥१०४॥

अहो ! मधुर से भी मधुरानन्द मूर्ति मेघश्याम श्रीकृष्ण, नवोदार गाढ़ानुराग से जिनकी दर्शनाकांक्षा करते हैं, ऐसे श्रीवृन्दावन में सुमहिम चमत्कारकारी अद्भुत रसनिधान श्रीराधा के पदांक समूह का दर्शन क्या मुझे होगा? ॥१०४॥

बलान्नीत्वातल्पे किमपि परिरभ्याधर सुधां,
निपीय प्रोल्लिख्य प्रखरनखरेण स्तनभरम्।
ततो नीविं न्यस्ते रसिक मणिना त्वत् कर,
धृते कदा कुञ्जच्छिदे भवतु मम राधेऽनुनयनम्॥१०५॥

हे श्रीराधे ! केलितल्प के प्रति बलपूर्वक आकर्षण कर आलिंगन पूर्वक अधर सुधापान करके तथा प्रखर नखराघात से वक्षोज को विक्षत कर रसिकमणि श्रीकृष्ण आपको कम्पितहस्ता देखकर स्वयं नीवीबन्धन कर देंगे, मैं कब कुञ्जस्थ छिद्र पथ से यह दर्शन करूँगी॥१०५॥

कर ते पत्रालिं किमपि कुचयोः कर्तुमुचितं,
पदं ते कुजेषु प्रियमभिसरन्त्या अभिसृतौ।
दृशौ कुञ्जच्छिद्रैस्तव निभृत केलिं कलयितुं,
यदावीक्षे राधे तदपि भविता किं शुभदिनम्॥१०६॥

हे श्रीराधे ! निज विटेन्द्रेण सह ललितां रहः गोष्ठी श्रोतुं हे श्रीराधे ! मेरा वैसा शुभदिन कब होगा ? जब परिचर्या के लिए हस्त, कृष्णाभिसार के समय अनुगमन में पदद्वय, अनुपम लीलामाधुरी दर्शन के लिए नयनद्वय उपयुक्त हुए हैं, यह मैं कब देखूगी॥१०६॥

रहो गोष्ठिं श्रोतुं तव निज विटेन्द्रेण ललितां,
करे धृत्वा त्वां वा नवरमणतल्पे घटयितुम्।
रतामर्दस्त्रस्तं कचभरमथो संयमयितुं,
विदध्याः श्रीराधे मम किमधिकारोत्सव रसम्॥१०७॥

हे श्रीराधे ! निज विटेन्द्र के साथ ललितरहः गोष्ठी श्रवण के निमित्त तथा मिलन निमित्त, केशपाश को संयत करने के लिए मैं कब सेवा सौभाग्य प्राप्त करूँगी ? ॥१०७॥

वृन्दाटव्यां नवनव रसानन्दपुजे निकुञ्ज,
गुञ्जभृङ्गी कुलमुखरिते मञ्जु मजु प्रहासैः,
अन्योन्यक्षेपणनिचयणप्राप्तसंगोपनाद्यैः,
क्रीड्ज्जीयाद्रसिक मिथुनं क्लृप्त केली कदम्बम्॥१०८॥

श्रीवृन्दावन में नव-नव रसानन्द पुंजयुक्त गुंजनशील भंगीकुल मुखरित निकुंज में मधुर-मधुर हास्य के साथ परस्पर कन्दुक क्षेपण धारण प्राप्त संगोपनादि क्रीड़ारत तथा विविध केलिकुशल रसिकयुगल जययुक्त हों॥१०८॥

रूपं शारदचन्द्र कोटि वदने धम्मिल्य मल्लीम्रजा,
मामोदै र्विकली कृतालि पटले राधे कदा तेऽद्भुतम्।
ग्रैवेयोज्ज्वल कम्बुकण्ठि मृदुदोर्वल्लीचलत् कङ्कणे,

वीक्षेपट्ट दुकूल वासिनि रणत्मजीरपादाम्बुजे॥१०९॥

हे कोटि शरद्चन्द्र वचने ! हे भूषणोज्ज्वल कम्बुकण्ठि ! हे पट्ट दुकूलवासिनी ! हे पट्ट दुकूलवासिनी ! आपके पादाम्बुशोभि श्रीनूपुर झंकृत हो रहे हैं, कोमल भुज कल्पलतास्थित कंकण संचालित हो रहे हैं एवं आपके कबरी स्थित मल्लिका माला के सौरभ से अलिकुल विह्वल हो रहे हैं, हे श्रीराधे ! आपके इस प्रकाररूपमाधुर्य्य का दर्शन मैं कब करूँगी ? ॥१०९॥

इतो भयमितस्त्रपाकुलमितो यशः श्रीरितो,
हिनस्त्यखिल शृङ्खलामपि सखी निवासस्त्वया।
सगद्गदमुदीरितं सुबहुमोहना काङ्या,
कथं कथमयीश्वरिप्रहसितैः कदा मेऽद्यसे॥११०॥

हे ईश्वरि ! सखीनिवास श्रीकृष्ण, आपके लिए भय, लज्जा, कुल, यश, श्री प्रभृति अखिल को छोड़ चुके हैं, अथच आप उन मोहन की प्राप्ति के लिए गद्गद सखी प्रकटपूर्ण वाक्य से प्रहास के साथ 'किस प्रकार किस प्रकार' कहकर कब मुझसे पून:-पुनः जिज्ञासा करोगी? ॥११०॥

श्यामे चाटुरुतानि कुर्वति सहालापान् प्रणेत्रीमया,
गृह्णाने च दुकूल पल्लवमहो हुङ्कृत्य मां द्रक्ष्यसि।
विभ्राणे भुजवल्लिमुल्लसितया रोम स्त्रजालङ्कृतां,
दृष्ट्वा त्वां रसलीन मूर्त्तिमथ किं पश्यामि हास्यं ततः॥१११॥

अहो ! श्रीकृष्ण चाट्रवाक्य से तोषामोद करने से आप जब उनके साथ रहस्यालाप में निविष्ट होयेंगी, उस समय मैं आपके वस्त्रांचल का स्पर्श करने से एवं उल्लास से आपकी भुजलता का स्पर्श करने से आप हुँकार द्वारा मेरे प्रति क्रोध दृष्टि से देखेंगी ? अनन्तर आपको रोमावली शोभिता तथा रसलीन मूर्ति को देखकर आपकी हास्य माधुरी का मैं दर्शन क्या करूँगी ? ॥१११॥

अहो रसिकशेखरः स्फुरति कोऽपि वृन्दावने,
निकुञ्ज नवनागरी कुचकिशोर केलिप्रियः।
करोतु स कृपां सखी प्रकट पूर्णनत्युत्सवो,
निजप्रियतमा पदे रसमयेऽदधद् यः शिरः।।११२॥

अहो ! निकुञ्ज में नवनागरीगण के साथ कैशोरोचित विलास ही जिनका प्रिय है एवं सखीगण को प्रकाश्यरूप में प्रणति करना ही जिनका सम्पूर्ण उत्सव है अर्थात् आनन्दमय आचरण है, वह रसिकशेखर श्रीकृष्ण श्रीवृन्दावन में अनिर्वचनीय रूप में स्फूर्ति प्राप्त हो रहे हैं, आप ऐसी कृपा करें कि जिससे उनकी प्रियतमा श्रीराधा के रसमय श्रीचरण-कमल के समीप में मेरी स्थिति हो॥११२॥

विचित्र वर भूषणोज्ज्वल दुकूलसत् कञ्चुकैः,
सखीभिरिति भूषिता तिलकगन्धमाल्यैरपि।
स्वयञ्च सकलाकलासु कुशलकृता नः कदा,
सुरास मधुरोत्सवे किमपि वेशयेत् स्वामिणी॥११३॥

जो सखीगण द्वारा विचित्र वरभूषण, उज्ज्वल दुकूल, उत्कृष्ट कञ्चुलिका, तिलक, गन्धमाल्यादि द्वारा विभूषिता एवं नृत्य गीतवाद्यादि समस्त कलाविद्या विषय में स्वयं ही सुशिक्षिता हैं, वह स्वामिनी श्रीराधा हमारे सुन्दर मधुर रासोत्सव में कब सम्मिलित होंगी॥११३।।

कदा सुमणि किङ्किणी वलय नुपुर प्रोल्लस,
न्महा मधुर मण्डलाद्भुत विलास रासोत्सवे।
अपि प्रणयिनो बृहद्भुज गृहीत कण्ठ्योवयं,
परं निजरसेश्वरी चरणलक्ष्मी वीक्षामहे॥११४॥

उत्कृष्ट मणिमय किङ्किणी, वलय-नूपुररणित महामधुर मण्डल में अद्भुत विलास रासोत्सव में प्रियतम श्रीकृष्ण के वृहद् भुजदण्डद्वय द्वारा गृहीत कण्ठा होकर भी कब हम सभी केवल निजरसेश्वरी श्रीराधा के श्रीचरण-युगल के ऊनविंशति चिह्न का ही दर्शन कर सकेंगी ? ॥११४॥

यद् गोविन्द कथा सुधारसहदे चेतोमयाजृम्भितं,
यद्वातद्गुणकीर्त्तनार्चन विभूषाद्यै दिन प्रापितम्।
यद्यत् प्रीतिरकारि तत् प्रियजनेष्यात्यन्तिकी तेन मे,
गोपेन्द्रात्मज जीवन प्रणयिनी श्रीराधिका तुष्यतु॥११५॥

श्रीकृष्ण कथारूप सुधाह्रद में जिस चित्त का विस्तार किया गया है, उनके गुण-कीर्तन-अर्चन विभूषणादि के द्वारा जो सुदिन हुआ है, किंवा उनके प्रियजन के प्रति जो प्रीति का आचरण हुआ है, उन सबके द्वारा गोपेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण की जीवन प्रणयिनी श्रीराधिका सन्तुष्ट होवें॥११५॥

रहोदास्यं तस्याः किमपि वृषभानोर्ब्रजवरी,
यसः पुत्र्याः पूर्ण प्रणय रसमुर्तेर्यदि लभे।
तदा नः किं धर्मैः किमु सुरगणैः किञ्च विधिना,
किमीशेन श्यामप्रियमिलनयत्नैरपि च किम् ॥११६॥

यदि मैं पूर्ण प्रणयरसमूर्ति ब्रजाधिप वृषभानुराजपुत्री श्रीराधा का दास्य किंकरीत्व प्राप्त कर सकूँ, तब धर्म, देवत्व विधि, ईश, कृष्णभक्त संगलाभ की चेष्टा आदि का कुछ प्रयोजन नहीं है।।११६॥

चन्द्रास्ये हरिणाक्षि देवि सुनसे शोणाधरे सुस्मिते,
चिल्लक्ष्मीभुजवल्लि कम्बुरुचिर ग्रीवे गिरीन्द्रस्तनि।
भज्यन्मध्य बृहन्नितम्ब कदली खण्डोरुपादाम्बुजे,
प्रोन्मीलन्नखचन्द्रमण्डलि कदा राधे मयाराध्यसे॥११७॥

हे चन्द्रानने !, हे हरिणाक्षि !, हे देवि !, हे सुनासिके !, हे शोणाधरे !, हे सुस्मिते !, हे श्रीभुजवल्लि !, हे कम्बुरुचिरग्रीवे!, हे गिरीन्द्रस्तनि !, हे क्षीणमध्ये वृहन्नितम्बे !, हे कदली खण्डोपम उरुशालिनी !, हे श्रीचरणकमले उद्भासित नखचन्द्रमण्डलभूषिते!, हे श्रीराधे ! मैं कब आपकी आराधना करूँगी ?॥११७॥

राधापादसरोजभक्तिमचला मुद्वीक्ष्य निष्कैतवां,
प्रीतः स्वं भजतोऽपि निर्भरमहाप्रेम्णाधिकं सर्वशः।
आलिङ्गत्यथ चुम्बति स्ववदनात्ताम्बूलमास्येऽर्पयेत्,

कण्ठे स्वां वनमालिकामपि मम न्यस्येत्कदा मोहनः ॥११८॥

मोहन श्रीकृष्ण, श्रीराधा पादाम्बुज में मेरी अकैतवा अविचला भक्ति को देखकर प्रसन्नता से मुझे प्रसादी ताम्बुल कब प्रदान करेंगे ? एवं प्रसादी वनमाला दान कब करेंगे? ॥११८॥

लावण्यं परमाद्भुतं रतिकलाचातुर्य्यमत्यद्भुतम्,
कान्तिः कापि महाद्भुता वरतनोर्लीलागतिश्चाद्भुता।
दृगभङ्गी पुनरद्भुताद्भुततमा यस्याः स्मितं चाद्भुतं,
सा राधाद्भुतमूर्तिरद्भुत रसं दास्यं कदा दास्यति ।।११९॥

जिनके लावण्य परमाद्भुत, रतिकला चातुर्य अत्यन्त अद्भुत, कान्ति, अनिर्वचनीय महाद्भुता, लीलागति अद्भुता एवं नयनभंगी अद्भुत से भी अद्भुततमा एवं जिनका मृदुहास्य भी अद्भुत है, वे अद्भुतमूर्ति श्रीराधा कब मुझे अद्भुत हास्य दान करेंगी॥११९॥

भ्रमद् भ्रुकुटि सुदरं स्फुरित चारु बिम्बाधरं,
ग्रहे मधुर झङ्कृतं प्रणयकेलि कोपाकुलम्।
महारसिक मौलिना सभय कौतुकं वीक्षितं,
स्मरामि तव राधिके रतिकलासुखं श्रीमुखम् ॥१२०॥

हे श्रीराधिके ! मैं आपकी घूर्णित सुन्दर भ्रूभंगी, चारु बिम्बाधरशोभी मधुर हुँकारयुक्त, प्रणयकेलि कोपाकूल, रसिकमौलि श्रीकृष्ण के द्वारा भय से एवं कौतुक से दृष्ट रतिकला सुखद श्रीमुख का स्मरण करती हूँ॥१२०॥

उन्मीलन्मुकुटच्छटा परिलसद्दिक चक्रवालं स्फुरत्,
केयूराङ्गदहार कङ्कण घटा निर्धूत रत्नच्छवि।
श्रोणी मण्डल किङ्किणीकलरवं मञ्जीरमञ्जुध्वनि,
श्रीमत् पादसरोरुहं भजमनो राधाभिधानं महः।।१२१॥

जिनके उन्मीलित मुकुट की च्छटा से दिग्मण्डल विलसित है, जिनके केयर अंगदहार कंकण की घटा रत्नच्छवि की निर्धूत किया है, जिनके नितम्बदेश में किङ्किणी को कलध्वनि एवं श्रीपदकमल में नूपुरों की मधुरध्वनि शंकित हो रही है। हे मन ! श्रीराधाभिधान महः का भजन करो॥१२१॥

श्यामामण्डल मौलिमण्डनमणिः श्यामानुरागस्फुर-
द्रोमोदभेद विभाविताकृतिरहो काश्मीर गौरच्छविः।
सातीवोन्मद कामकेलि तरला मां पातु मन्दस्मिता,
मन्दारद्रुमकुञ्जमन्दिरगता गोविन्द पट्टेश्वरी॥१२२॥

अहो ! जो श्यामा गोपांगनागण के शिरोभूषणमणिस्वरूपा हैं, जिनके श्रीअंग श्यामानुराग हेतु विकसित रोमाञ्च द्वारा विभाषित हैं, जिनकी कान्ति कुंकुम गौर है एवं जो अत्यन्त उन्मदप्रद कन्दर्पकेलि द्वारा विचलिता है, मृदुहास्य, कल्पकुञ्जमन्दिरगता उन श्रीगोविन्द पट्टेश्वरी श्रीराधा मेरी रक्षा करें।॥१२२॥

उपास्यचरणाम्बुजे ब्रजभृतां किशोरीगणे,
महद्भिरपि पूरुषैरपरिभाव्य भावोत्सवे।
अगाधरसधामनि स्वपदपद्मसेवाविधौ,

विधहि मधुरोज्ज्वलामिव कृतिं ममाधिश्वरि ॥१२३॥

हे अधीश्वरी ! आपके श्रीचरणकमल, ललितादि मुख्या ब्रजकिशोरीगणों के नित्य उपास्या हैं एवं आपका भावोत्सव नारदादि महापुरुषों का भी अपरिभाव्य हैं। हे श्रीराधे ! उस अगाध रसनिलयस्वरूप आपके पदकमल की मधुरोज्ज्वल सेवा में रत होने के लिए मुझ पर कृपा करो॥१२३॥

आनम्राननचन्द्रमीरित दृगापाङ्गच्छटामन्थर,
किञ्चिद्दर्शिशिरोऽवगुण्ठनपटं लीलाविलासावधिम्।
उन्नीयालकमञ्जरी: कररुहैरालक्ष्य सन्नागर-
स्याङ्गेश्ङ्गतव राधिके सचकितालोकं कदा लोकये॥१२४॥

हे श्रीराधिके ! नागरवर श्रीकृष्ण के अंग में आपका अंग मिलित अर्थात् परस्पर के आलिंगन बद्ध देखकर मैं कब निज करनख समूह के द्वारा आपकी अलका मञ्जरी का प्रसाधन कर, आनम्रवदनचन्द्रे, ईषत् नयनापांगच्छटा, किंचित्दर्शि मस्तक में अवगुण्ठन वस्त्र एवं सचकित अवलोकन का दर्शन करूँगी ? ॥१२४॥

राकाचन्द्रो वराको यदनुपमरसानन्दकन्दाननेन्दो-
स्तत्तादृक्चन्द्रिकाया अपि किमपि कणामात्रकस्याणुतोऽपि।
यस्या: शोणाधर श्रीविधृत नवसुधा माधुरी सारसिन्धु:,
सा राधा काम बाधा विधुर मधुपति प्राणदा प्रीयतां न: ॥१२५॥

पूर्णचन्द्र, जिनके अनुपम रसानन्दकन्द वदनचन्द्र की किरणकणा के तुल्य भी नहीं है, जिनके अरुणाधर, श्रीविधृत नवसुधा माधुरी का सारसिन्धु है, कामबाधा विधुर मधुपति श्रीकृष्ण की जीवनदायिनी वह श्रीराधा मेरे प्रति प्रसन्न होवें।।१२५॥

राकानेकविचित्रचन्द्र उदित: प्रेमामृत ज्योतिषां.
वीचीभि: परिपूरयेदगणित ब्रह्माण्डकोटिं यदि।
वृन्दारण्य निकुञ्ज सीमनि तदाभास: परं लक्ष्यसे,
भावेनैव यदा तदैव तुलये राधे तव श्रीमुखम्॥१२६॥

हे श्रीराधे ! एक समय में विचित्र अनेक चन्द्र उदित होने से उसकी प्रेमामृत ज्योति तरंग से यदि अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड परिपूर्ण हो जाता है, तथापि इस श्रीवृन्दावन निकुञ्ज सीमा में आपके श्रीमुख माधुरी का आभास ही प्रतीत होगा, अतएव केवल भाव के द्वारा ही मैं आपके श्रीमुख की तुलना चन्द्र के साथ कर रही हूँ।।१२६॥

कालिन्दीकुल कल्पद्रुमतलनिलय प्रोल्लसत् केलिकन्दा,
वृन्दाटव्यां सदैव प्रकटतररहोवल्लवीभावभव्या।
भक्तानां हृत् सरोजे लधुर रससुधा स्यन्दिपादारविन्दा,
सान्द्रानन्दाकृति न: स्फुरतु नवनव प्रेमलक्ष्मीरमन्दा॥१२७॥

जो श्रीयमुनातीरवर्ति कल्पतरुतलस्थित भवन प्रोल्लसित केलि विलास का मूलस्वरूपा है, श्रीवृन्दावन में सर्वदा प्रकाशमाना रह वल्लवी ललितादि के भावविभाविता हैं एवं भक्तगण के हृदय कमल में मधुर रससुधास्रावी पादारविन्द विशिष्टा हैं, उन सान्द्रानन्द मूर्ति अमन्दा नित्याभिनव प्रेमलक्ष्मी श्रीराधा मेरे हृदय में स्फुरित होवें॥१२७॥

शुद्ध प्रेमैक लीलानिधि रहहमहातङ्कमङ्कस्थिते च,
प्रेष्ठे विभ्रत्यदभ्रस्फुरदतुल कृपास्नेह माधुर्य्यमूर्तिः।
प्राणाली कोटिनिराजित पद सुषमा माधुरी माधवेन,
श्रीराधा मामगाधामृतरसभरिते कर्हिदास्येऽभिषिञ्चेत्॥१२८॥

जो विशुद्ध प्रेमलीलानिधि, आश्चर्य यह है कि-प्रियतम गोविन्द प्रियवर्ग दुर्गम अंक में होते हुए भी उनके विच्छेद की आशंका से जो भी होता है, जो प्रचुर प्रकाशमान् अतुलकृपा स्नेह माधुर्य की मूर्ति हैं एवं श्रीकृष्ण तथा कोटि प्राणसखी के द्वारा नीराजित श्रीचरण सुषमा माधुरी विशिष्टा हैं, वह श्रीराधा अगाधामृत रसपूर्ण दास्यता में मुझे कब अभिषिक्त करेंगी? ॥१२८॥

वृन्दारण्य निकुञ्जसीमसु सदा स्वानङ्गरङ्गोत्सवै,
आद्यन्त्यद्भुत माधवाधरसुधा माध्वीक संस्वादनैः।
गोविन्द प्रियवर्ग दुर्गमसखी वृन्दैरनालक्षिता,
दास्यं दास्यति मे कदा नु कृपया वृन्दावनाधिश्वरी॥१२९ ॥

जो श्रीवृन्दावन की निकुञ्ज सीमा में स्वानंग रंगोत्सव में अद्भुत माधवाधर सुधारूप माध्वीक का आस्वादन कर मदमत्ता की भाँति अवस्थान करती हैंएवं श्रीगोविन्द के प्रियवर्ग के दुरधिगम्य, सखीगण के द्वारा अनालक्षिता हैं, वह वृन्दावनाधीश्वरी श्रीराधा कृपापूर्वक मुझे कब दास्यता प्रदान करेंगी? ||१२९॥

मल्लीदाम निबद्ध चारुकवरं सिन्दूररेखोल्लसत्,
सीमन्तं नवरत्नचित्र तिलकं गण्डोल्लसत् कुण्डलम्।
निष्कग्रीवमुदारहारमरुणं विभ्रद्दुकूलं नवं,
विद्युत् कोटिनिभं स्मरोत्सवमयं राधाख्यमीक्षेमहः॥१३०॥

जिनकी मल्लिका माला निबद्ध चारु कवरी, सिन्दूर रेखोज्ज्वल सीमन्त, नवरत्न चित्रित तिलक, कुण्डलशोभी गण्ड, स्वर्णपदकशोभी ग्रीवा, महान् हार, प्रभात सूर्य की भाँति अरुण वर्ण का दुकूल, कोटि तडित् के समान अंगप्रभा, उन स्मरोत्सवमय राधाख्यमह का मैं दर्शन कर रही हूँ॥१३०॥

प्रेमोल्लासैकसीमा परमरसचमत्कार वैचित्रसीमा,
सौन्दर्य्यस्यैकसीमा किमपि नववयोरूप लावण्य सीमा।
लीलामाधुर्य्य सीमा निजजन परमौदार्य्य वात्सल्य सीमा,
सा राधा सौख्यसीमा जयति रतिकलाकेलि माधुर्य सीमा॥१३१॥

प्रेमोल्लास की सीमा, शृङ्गाररस चमत्कार वैचित्र्य की सीमा, सौन्दर्य की सीमा, अनिर्वचनीय नववयोरूप लावण्य की सीमा, लीलामाधुर्य की सीमा, निजजन के प्रति परमौदार्य वात्सल्य की सीमा, सौख्य सीमा एवं रतिकेलि माधुर्य की सीमारूपी श्रीराधा सर्वोत्कर्ष के साथ विराजित हैं।।१३१॥

यस्यास्तत् सुकुमार सुन्दरपदोन्मीलन्नखेन्दुच्छटा,
लावण्यैकलवोपजीविसकलश्यामामणीमण्डलम्।
शुद्ध प्रेमविलास मूर्तिरधिकोन्मीलन्महामाधुरी,

धारासार धुरीणकेलि विभवा सा राधिका मे गतिः ॥१३२॥

श्रीवृन्दावनस्था निखिल श्यामा रमणी की मणिस्वरूपा ललितादि, जिनके सुकोमल पदयुगल की उन्मीलित नखचन्द्र की च्छटा का लावण्य लवमात्र उपजीवी हैं एवं अत्यन्त उन्मीलित महामाधुरी धारासारधुरीय श्रीकृष्ण की केलि ही जिनका एकमात्र वैभव है, उन शुद्ध प्रेम विलासमूर्ति श्रीराधिका ही मेरी गति हैं।।१३२॥

कलिन्दगिरिनन्दिनी सलिल बिन्दु सन्दोऽभृन्
मृदूद्गतिरतिश्रमं मिथुनमद्भुतक्रीड़या।
अमन्दरसतुन्दिलं भ्रमरवृन्दवृन्दाटवी,
निकुञ्जवरमन्दिरे किमपि सुन्दरं नन्दति॥१३३॥

अमन्द रसतुन्दिल भ्रमर समूहाकीर्ण वृन्दावनस्थ निकुञ्जवर मन्दिर में अनिर्वचनीय सुन्दर नागर-नागरी युगल, श्रीयमुना का सलिलकणावाही समीर के मृदुस्पर्श से रतिश्रम अपगत होने से अद्भुत क्रीड़ा विहार से आनन्दित हो रहे हैं।।१३३॥

व्याकोशेन्दीवर विकसितामन्दहेमारविन्दं,
श्रीमन्निस्यन्दन रतिरसान्दोलि कन्दर्प केलि।
वृन्दारण्ये नवरससुधास्यन्दिपादारविन्दं,
ज्योतिर्द्वन्द्वं किमपि परमानन्दकन्दं चकास्ति॥१३४॥

श्रीवृन्दावन में प्रफुल्लित इन्दीवर व विकसित स्वर्णकमल का सम्मिलन शोभायुक्त, निःस्रवमान् रतिरस का आन्दोलनकारी कन्दर्पकेलि समन्वित है, वह नवरस सुधास्यन्दि पादारविन्द विशिष्ट अनिर्वचनीय परमानन्दकन्द ज्योतिर्द्वन्द्व प्रकाशित हैं।।१३४॥

ताम्बूलं क्वचिदर्पयामि चरणौ संवाहयामि क्वचि-
न्मालाद्यैः परिमण्डये क्वचिदहो संवीजयामि क्वचित्।
कर्पूरादि सुवासितं क्वच पुनः सुस्वादुचाम्भोऽमृतं,
पायाम्येव गृहे कदा खलु भजे श्रीराधिकामाधवौ॥१३५॥

अहो ! मैं कब ताम्बूल अर्पण करूँगी एवं श्रीचरणद्वय का सम्बाहण करूँगी तथा माल्यादि के द्वारा भूषित करूँगी एवं बीजन करूँगी तथा कर्पूरादि वासित सुस्वादु सलिलामृत का पान कराऊँगी, इस प्रकार से मैं कब निकुञ्ज गृह में श्रीराधामाधवकी सेवा करूँगी ? ॥१३५॥

प्रत्यङ्गोच्छलदुज्ज्वलामृतरस प्रेमैक पूर्णाम्बुधि
लावण्यैक सुधानिधिः पुरुकृपावात्सल्यसाराम्बुधिः।
तारुण्यप्रथमप्रवेशविलसन्माधु-साम्राज्यभू
गुप्तः कोऽपि महानिधिर्विजयते राधारसौकावधिः॥१३६॥

जो प्रति अंग में उच्छलित उज्ज्वलामृतरस प्रेम का एकमात्र पूर्णाम्बुधि, लावण्य का सुधानिधि, विपुल कृपावात्सल्य का साराम्बुधि नवयौवन विलसित माधुर्य साम्राज्य की भूमि, रसस्वरूप श्रीकृष्ण के आश्रय की अवधि हैं, उन श्रीराधानामक एक गुप्त महानिधि सर्वोत्कर्ष के साथ विराजित हैं।।१३६॥

यस्याः स्फूर्जत् पदनखमणि ज्योतिरेकच्छटायाः,

सान्द्राप्रेमामृतरसमहासिन्धुकोटि विलासः।
सा चेद्राधा रचयति कृपाद्दष्टिपातं कदाचि-
न्मुक्तिस्तुच्छी भवति बहुशःप्राकृताप्राकृत श्रीः॥१३७॥

जिनके प्रकाशमान् पदनखमणिज्योतिच्छटा का विलास निविड़ प्रेमामृत कोटिसिन्धु राधानामोच्चारणं स्वरूप हैं, वह श्रीराधा यदि कभी कृपाद्दष्टिपात करें तो बहुशः प्राकृताप्राकृत श्री एवं मुक्ति तुच्छ हो जाती है।।१३७॥

कदा वृन्दारण्ये मधुर मधुरानन्दरसदे,
प्रियेश्वर्याः केलिभवननवकुजानि मृगये।
कदा श्रीराधाया पदकमलमाध्वीकलहरी,
परीवाहैश्चेतो मधुकरमधीरं मदयिता॥१३८॥

मधुरादपि मधुर आनन्द रसप्रद श्रीवृन्दावन में कब मैं प्रियेश्वरी श्रीराधा के केलिभवन समूह का अन्वेषण करूँगी ? एवं कब मैं उनके पदकमल माध्वीक लहरी परीवाह के द्वारा मेरा चंचलचित्त मधुकर उन्मादित होगा? ॥१३८॥

राधाकेलि निकुञ्ज वीथिषु चरन् राधाभिधामुच्चरन्
राधाया अनुरूपमेव परमं धर्म रसेनाचरन्।
राधायाश्चरणाम्बुजं परिचरन्नानोपचारैर्मुदा,
कर्हि स्यां श्रुतिशेखरोपरिचरन्नाश्चर्यचर्या चरन्॥१३९॥

श्रीराधा नामोच्चारण करते-करते एवं श्रीराधा के केलिकुञ्ज पथ में विचरण करते-करते रस के साथ श्रीराधा के अनुरूप परमधर्म का आचरण करते-करते एवं विविध उपचार के द्वारा आनन्द से श्रीराधा के श्रीचरणाम्बुजद्वय की सेवा करते-करते कब मैं श्रुतिशेखर के उपरिचर आश्चर्य चर्या का आचरण करती रहूँगी॥१३९॥

यातायातशतेन सङ्गमितयोरन्योन्यवक्त्रोल्लस-
च्चन्द्रालोकन संप्रभूत बहुलानङ्गाम्बुधिक्षोभयोः।
अन्तः कुञ्ज कुटीरतल्पगतयोर्दिव्याभूतक्रीड़यो,
राधामाधवयोः कदा नु शृणुयां मजीरकाञ्चीध्वनिम्॥१४०॥

अनेक बार गमनागमन के बाद सम्मिलित, परस्पर के श्रीमुख दर्शन से संजात बहुल अनंग सिन्धु का उच्छ्वासयुक्त, कुंजकुटीराभ्यन्तर में केलितल्पगत एवं दिव्याद्भुत क्रीडारत श्रीराधामाधव की मंजीर कांचीध्वनि का श्रवण मैं कब करूँगी ? ॥१४०॥

अहो भुवन मोहनं मधुर माधवी मण्डपे,
मधूत्सवसमुत्सुकं किमपिनीलपीतच्छवि।
विदग्धमिथुनं मिथोद्दढ़तरानुरागोल्लस-
न्मदं मदयते कदा चिरतरं मदीयं मनः॥१४१॥

अहो ! मधुर माधवी मण्डप में मधूत्सव समुत्सुक, परस्पर द्दढतर अनुरागोल्लासी मदविशिष्ट, अनुपम नीलपीतच्छवि भुवन मोहन विदग्ध युगल, कब मेरे मन को प्रमोदित करेंगे? ॥१४१॥

राधानाम सुधारसं रसयितुं जिह्वास्तु मे विह्वला,
पादौ तत् पदकाङ्क्तितासुचरता वृन्दाटवी वीथिषु।

तत् कर्म्मेव करः करोतु हृदयं तस्यां पदं ध्यायता-
त्तत्भावोत्सवतः परं भवतु मे तत् प्राणनाथेरतिः।।१४२।।

मेरी रसना राधानामरूप सुधारसास्वादन में विह्वला हो एवं मेरे पदयुगल श्रीराधा के पदांकलांच्छित श्रीवृन्दावन के पथ-पथ में विचरण करे तथा करद्वय श्रीराधा के कर्म में नियुक्त हो एवं हृदय उनके पदयुगल का ध्यान करे तथा उनके भावोत्सव से उनके प्राणनाथ श्रीकृष्ण में मेरी परमभक्ति हो॥१४२॥

मन्दीकृत्य मुकुन्द सुन्दर पदद्वन्द्वारविन्दामल,
प्रेमानन्दममन्दमिन्दुतिलकायुन्मादकन्दं परम्।
राधाकेलि कथा रसाम्बुधिचलद् वीचिभिरान्दोलितं,
वृन्दारण्य निकुञ्ज मन्दिर वरालिन्दे मनोनन्दतु।।१४३॥

अप्राकृत अमन्द एवं चन्द्रचूडशिवादि का भी उन्मादकन्द श्रीकृष्ण के सुन्दर पदारविन्द युगलोत्थ निर्मल प्रेमानन्द के प्रति तुच्छ ज्ञान कर मेरा मन केवल श्रीराधा की केलिकथा रसाम्बुधि की चंचल तरंग से आन्दोलित होकर श्रीवृन्दावन के निकुञ्ज मन्दिरस्थ प्रांगण सुख का अनुभव करे॥१४३॥

राधा नामैव कार्यं ह्यनुदिनमिलितं साधनाधीशकोटि-
स्त्याज्यानीराज्य राधा पदकमल सुधां सत्पुमाग्रकोटिः,
राधा पादाब्जलीलाभुवि जयति सदाऽमन्दमन्दारकोटिः,
श्रीराधाकिङ्करीणां लुठति चरणयोरद्भुतासिद्धिकोटिः।।१४४॥

अनुदिन राधानाम श्रवण कीर्तनादिरूप कार्यप्राप्त होने से कोटि श्रेष्ठ साधन भी परित्यज्य होते हैं, कारण श्रीराधापादाब्ज लीलाभूमि श्रीवृन्दावन में अमन्द कोटि कल्पतरु सर्वदा विद्यमान हैं एवं श्रीराधा किङ्करीगणों के चरणों में अद्भुत सिद्धि कोटि सदा विलुण्ठित है।।१४४॥

मिथोभङ्गीकोटिप्रवहदनुरागामृतरसो,
तरङ्गद् भ्रूभङ्गक्षुभितवहिरभ्यन्तरमहो।
मदाघूर्णन्नेत्रं रचयति विचित्रं रतिकला,
विलासं तत् कुजे जयति नवकैशोरमिथुनम्॥१४५॥

अहो ! परस्पर भंगी कोटि प्रवाहमान् अनुरागामृत रस से उद्गत तरंगरूप भ्रूभंग के द्वारा जिनके वाह्याभ्यन्तर आलोड़ित हैं एवं नेत्रयुगल मदघूर्णित हैं, उन नवकैशोर-मिथुन, कुंज के मध्य में विचित्र रतिकला विलास की रचना कर जययुक्त हो रहे हैं।।१४५॥

काचिद् वृन्दावन नवलतामन्दिरे नन्दसूनो,
द्दृष्यद् दोष्कन्दल दृढ़परीरम्भ निस्पन्दगात्री।
दिव्यानन्ताद्भुतरसकलाः कल्पयन्त्याविरास्ते,
सान्द्रानन्दामृत रसघन प्रेममूर्तिः किशोरी॥१४६॥

नन्दनन्दन के दर्पयुक्त बाहुद्वन्द्व द्वारा दृढपरीरम्भन से निष्पन्दगात्री एवं सान्द्रानन्दामृत रसधन प्रेममूर्ति किशोरीमणि वृन्दावन के नवलता मन्दिर में दिव्य अनन्ताद्भुत रसकला को विस्तार कर विराजित हैं।।१४६॥

न जानीते लोकं नच निगमजातं कुलपरम्परां,

वा नो जानात्यहह न सताञ्चापि चरितम्।
रसं राधायामाभजति किलभावं ब्रजमणौ,
रहस्ये तदयस्य स्थितिरपि न साधारणगतिः॥१४७॥

जो जन, इस रहःप्रदेश में ब्रजमणि श्रीराधा का भाव एवं रस का भजन निश्चयरूप से करते हैं, अहो ! वह संसारधर्म तथा वेदोक्त काम्यकर्म की अपेक्षा नहीं रखते हैं, यहाँ तक कि वह कुलपरम्परा एवं साधु-सम्प्रदाय के बन्धन से भी मुक्त रहते हैं, इस अवस्था में जिसकी स्थिति है उसकी कभी भी साधारण गति नहीं होती है॥१४७॥

ब्रह्मानन्दैकवादाः कतिचन भगवद्वन्दनानन्दमत्ताः,
केचिद् गोविन्दसख्याद्यनुपम परमानन्दमन्येस्वदन्ते।
श्रीराधा किङ्करीणां त्वखिल सुखचमत्कारसारैकसीमा,
तत् पादाम्भोज राजन्नखमणिविलसज्ज्योतिरेकच्छटापि॥१४८॥

कतिपय व्यक्ति ब्रह्मानन्दवादी, किसी को भगवद् वन्दन से आनन्द होता है, कोई तो श्रीगोविन्द सख्यादि अनुपम परमानन्द का आस्वादन करता है, किन्तु श्रीराधा किङ्करीगण श्रीराधा के पादपद्मराजित नखमणि ज्योति की एकमात्र च्छटा से ही अखिल सुख चमत्कार की अवधि को प्राप्त करती हैं॥१४८॥

न देवैर्ब्रह्माद्यैर्नखलु हरिभक्तैर्नसुहृदा,
दिभिर्यद्वै राधा मधुपति रहस्यं सुविदितम्।
तयोर्दासीभूत्वा तदुपचित केलीरसमये,
दुरन्ता प्रत्याशा हरि हरि दृशो र्गोचरयितुम्॥१४९॥

जिन श्रीराधामाधव का रहस्य ब्रह्मादि देवगण, हरिभक्तगण, सुहृदवर्ग भी निश्चितरूप से विदित नहीं कर पाते हैं। हरि हरि ! उन श्रीराधामाधव की दासी होकर तदुपथित लीला दर्शन के लिए मेरी दुरन्त प्रत्याशा हो रही है॥१४९॥

त्वयि श्यामे नित्यप्रणयिनि विदग्धे रसनिधौ,
प्रिये भूयोभूयः सुदृढ़मतिरागो भवतु मे।
इति प्रेष्ठेनोक्ता रमण मम तववचो,
वदन्तीति स्मेरा मम मनसि राधा विलसतु॥१५०॥

हे श्यामे ! हे नित्य प्रणयिनी ! हे विदग्धे ! हे प्रिये ! तुम रसनिधि हो, तुम्हारे प्रति मेरा गाढ़ अनुराग पुनः-पुनः सुदृढ़ हो, श्रीकृष्ण के इस प्रकार कहने से श्रीराधा मृदुहास्य से बोलीं, हे रमण ! मेरे मन में भी वही बात है, वह श्रीराधा मेरे हृदय में सदा स्फुरित हों॥१५०॥

सदानन्दं वृन्दावननवलतामन्दिर वरे-
ष्वमन्दैः कन्दर्पोन्मदरतिकलाकौतुकरसम्।
किशोरं तज्ज्योति युगलमतिचोरं सम भवं,
ज्वलज्ज्वालं शीतैः स्वपदमकरन्दैः शमयतु॥१५१॥

श्रीवृन्दावन के नवलता मन्दिराभ्यन्तर में कन्दर्पोन्मद रतिकला कौतुकरस, सदानन्द, किशोराकृति वह ज्योति युगल, अमन्द शीतल स्वपद मकरन्द के द्वारा मेरी अति घोर ज्वलन्त भवज्वाला को शान्त करें।।१५१॥

उन्मीलन्नवमल्लिदामविलसद् धर्मिल्लभारे,
बृहच्छ्रोणी मण्डलमेखला कलरवे शिजत् सुमजीरिणि।
केयूराङ्गद कङ्कणावलिलसद् दोर्वल्लिदीप्तिच्छटे,
हेमाम्भोरुह कुट्नलस्तनि कदा राधे द्दशा पीयसे॥१५२॥

हे प्रफुल्ल नवमल्लिका माला शोभित कवरीभारे ! हे बृहन्नितम्बमण्डले मेखला कलरवे ! हे शब्दायमान् नूपुरधारिणी ! हे केयूरांगद कंकणावलि विलसित बाहुवल्ली दीप्तिच्छटे ! हे कनककमल कलिकास्तनि ! हे श्रीराधे ! कब मेरी दर्शन तृष्णा को शान्त करोगी? ॥१५२॥

अमर्यादोन्मीलत् सुरतरसपीयूषजलधे,
स्तर रुत्तुङ्गैरिव किमपि दोलायिततनुः।
स्फुरन्ती प्रेयोऽङ्के स्फुटकनकपङ्केरुहमुखी,
सखीनां नो राधे नयनसुखमाधास्यसि कदा॥१५३॥

हे श्रीराधे ! मर्यादा को अतिक्रम कर जो लीलामृत समुद्र उद्भुत हुआ है, उसके उत्तुंग सुधांग के द्वारा आपका तनु अनिर्वचनीय रूप में आन्दोलित हो रहा है, आप प्रियतम के अंग से स्फूर्ति प्राप्त हो रही है एवं आप प्रफुल्ल कनककमलमुखी हो आप कब हम सभी सखियों को नयनानन्द प्रदान करोगी॥१५३॥

क्षरन्तीव प्रत्यक्षरमनुपम प्रेमजलधिं,
सुधाधारा वृष्टीरिव विदधती श्रोत्रपुटयोः।
रसार्द्रासन्मृद्वी परम सुखदा शीतलतरा,
भवित्री किं राधे तव सह मया कापि सुकथा॥१५४॥

हे श्रीराधे ! मेरे साथ आपके प्रति अक्षर में अनुपम प्रेमजलधि निर्झरिणी, श्रवणपुट में सुधाधारा वर्षणकारिणी रसार्दा सन्मृद्वी परमसुखदा, शीतलतरा व अनिर्वचनीया सुकथा क्या होगी ? ॥१५४॥

अनुल्लिख्यानन्तानपि सदपराधान्मधुपति-
म्महा प्रेमाविष्टस्तव परम देयं विमृशति।
तवैकं श्रीराधे गृणत इह नामामृतरसं,
महिम्नः कः सीमां स्पृशतु तव दास्यैकमनसाम्॥१५५॥

हे श्रीराधे ! अतिशय श्रीकृष्ण प्रेमाविष्ट होकर जो व्यक्ति एकबार श्रीराधानाम सुधारस का आस्वादन करता है, वह अनन्त सदअपराध को न मानकर केवल आपके दास्य की चिन्ता करता है, अतएव आपके दास्यैचित व्यक्तियों की महिमा की सीमा का स्पर्श कौन कर सकता है ? ॥१५५॥

लुलितनवलवङ्गोदार कर्पूरपूर,
प्रियतममुखचन्द्रोद्गीर्णताम्बुलखण्डम्।
घनपुलककपोला स्वादयन्तीमदास्ये-
ऽर्पयतु किमपि दासीवत्सला कर्हि राधा॥१५६॥

घनपुलक कपोला अनिर्वचनीय दासीवत्सला श्रीराधा नवलवंग व प्रचुर कर्पूर समन्वित प्रियतम श्रीकृष्ण के श्रीमुखचन्द्र से निर्गलित ताम्बूल खण्डका आस्वादन करते-करते कब मेरे वदन में उसका अर्पण करेंगी॥१५६॥

सौन्दर्य्यामृतराशिरद्भुतमहालावण्यलीलाकला,
कालिन्दीवरवीचिडम्बरपरिस्फुर्जत्कटाक्षच्छविः।
सा कापि स्मरकेलिकोमलकलावैचित्र्यकोटिस्फुरत्,
प्रेमानन्दघनाकृति दिशतु मे दास्यं किशोरीमणिः॥१५७॥

जो सौन्दर्यामृत की राशिस्वरूपा, अद्भुत महालावण्य लीलाकला, श्रीयमूना तरंग की आटोप की अपेक्षा से भी जिनकी चमत्कार कटाक्षच्छवि एवं जो कन्दर्पकेलि कोटि कोमलकला वैचित्र्य विस्फुरित प्रेमानन्द घनाकृति हैं, वह अनिर्वचनीय किशोरीमणि मुझे दास्यता प्रदान करें।।१५७॥

दुकूलमतिकोमलं कलयदेव कौसुम्भकं,
निबद्धनवमल्लिकाललितमाल्यधम्मिल्लकम्।
बृहत् कटितटस्फुरन्मुखर मेखलालङ्कृतं,
कदानुकलयामि तत् कनकचम्पकाभं महः।।१५८॥

जिनके परिधान में अति कोमल कौसुम्भारुण दुकूल है एवं धम्मिल्ल मधुमल्लिका के ललित माल्य से निबद्ध है, जिनके विपुल कटितट में मुखर मेखला सुशोभित है, उन कनकचम्पकाभ 'महः' अर्थात् ज्योतिरूप का दर्शन मैं कब करूँगी ? ॥१५८॥

कदा रासे प्रेमोन्मदरसविलासेऽद्भुतमये
दृशोमध्ये भ्राजन्मधुपति सखीवृन्दवलये।
मुदान्तः कान्तेन स्वरचितमहालास्यकलया,
निषेवे नृत्यन्तीं व्यजनवरताम्बूलशकलैः॥१५९॥

प्रेमोन्मद रस विलास, अद्भुतमय चारों ओर शोभित मधुपति सखीवृन्द वलययुक्त रासमण्डल में जो प्रफुल्ल कान्त के साथ स्वरचित महालास्य कला का विस्तार कर नृत्य कर रही हैं, उन श्रीराधा की सेवा मैं कब व्यजन नवताम्बूलखण्ड के द्वारा करूँगी? ॥१५९॥

प्रसृमरपटवासे प्रेमसीमाविकासे,
मधुर मधुर हासे दिव्यभूषाविलासे।
पुलकितदयितांसे संवलद् बाहुपाशे,
तदति ललित रासे कर्हि राधामुपासे॥१६०॥

जिसमें विस्तार प्राप्त पटवास, प्रेमसीमा का विकास, मधु-मधुर हास, दिव्यभूषा का विलास एवं पुलकितदयितां से सुविन्यस्त बाहुपाश है, उस अति ललित रास में कब मैं श्रीराधा की उपासना करूँगी ? ॥१६०॥

यदि कनक सरोजं कोटि चन्द्रांशुपूर्ण,
नव नव मकरन्दस्यन्दि सौन्दर्यधाम।
भवति लसितचञ्चत्खञ्जनद्वन्द्वमास्यं,

तदपि मधुर हास्यं दत्तदास्यं न तस्याः ॥१६१॥

श्रीराधा का वदन यदि कनक कमलवत् प्रफुल्ल, कोटि चन्द्रांशुपूर्ण, नव-नव मकरन्दस्यन्दी, सौन्दर्य निलय, चंचल नयन खञ्जन द्वन्द्वशोभित एवं मधुर हास्ययुक्त हैं, तब वह दत्तदास्य क्यों नहीं होगा ? ॥१६१॥

सुधाकरसुधाकरं प्रतिपदस्फुरन्माधुरी,
धुरीण नवचन्द्रिका जलधितुन्दिलं राधिके।
अतृप्तहरिलोचनद्वयचकोरपेयं कदा,
रसाम्बुधि समुन्नतं वदनचन्द्रमीक्षे तव॥१६२॥

हे श्रीराधिके ! सुधाकर के भी सुधाकर, प्रतिपद में देदीप्यमाना, माधुरीसाररूप नवचन्द्रिका समुद्र के बर्द्धक, अतृप्त हरिलोचनद्वयरूप चकोर का पेय एवं रसाम्बुधि का क्षोभकारक आपके वदनचन्द्र का दर्शन मैं कब करूँगी ? ॥१६२॥

अङ्ग प्रत्यङ्ग रिङ्गन्मधुरतर महाकीर्ति पीयूष सिन्धो,
रिन्दोः कोटि विनिन्दद् वदनमतिमदालोल नेत्रं दधत्याः।
राधायाः सौकुमार्याद्भुत ललिततनोः केलि कल्लोलिनीना,
मानन्दस्यन्दिनीनां प्रणय रसमयान् किं विगाहे प्रवाहान्॥१६३॥

जो अंग-प्रत्यंग संचालन हेतु मधुरतर महाकीर्ति पीयूष के सिन्धु हैं, जिनका इन्दुकोटि विनिन्दित वदन है, अति मदालोल नयन विशिष्टा हैं, जिनका तनु सौकुमार्याद्भुत ललित है, उन श्रीराधा के आनन्द निःस्यन्दिनी केलिकल्लोलिनी के प्रणय प्रवाह में कब मैं अवगाहन करूँगी॥१६३॥

मत्कण्ठे किं नखरशिखया दैत्यराजोऽस्मि नाहं,
मैवं पीड़ां कुरुकुचतटे पूतना नाहमस्मि।
इत्थं कीरैरनुकृतवचः प्रेयसा सङ्गतायाः,
प्रातः श्रोष्ये तव सखि कदा केलिकुजं मृजन्ती॥१६४॥

मेरे कण्ठ में नखराघात न करो, मैं दैत्यराज तणावर्त्त नहीं हूँ, वक्षोज को पीडित न करो, मैं पूतना नहीं हूँ, हे सखि ! प्रिय के साथ वाक्यालाप का कथन प्रभात में शुक द्वारा होने से मैं कब केलिकुञ्ज संस्कार करते समय उसका श्रवण करूँगी॥१६४॥

जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिषु स्फुरतु मे राधा पदाब्जच्छटा,
वैकुण्ठे नरकेऽथवा मम गतिर्नान्यास्तु राधां विना।
राधा केलिकथा सुधाम्बुधि महावीचिभिरान्दोलितं,
कालिन्दीतटकुञ्जमन्दिरवरालिन्दे मनोविन्दतु॥१६५॥

मेरी जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्था में श्रीराधापादाब्जच्छटा स्फुरित हो, वैकुण्ठ में अथवा नरक में श्रीराधा पदाब्ज को छोड़कर मेरी अन्य गति न हो, किन्तु श्रीराधाकेलिकथारूप सुधासमुद्र की तरंग से आन्दोलित मेरा मन श्रीयमुनातीरवर्त्ति कुञ्जमन्दिरांगण में विराजित हो॥१६५॥

अलिन्दे कालिन्दीतटनवलतामन्दिरगते,

रतामर्दोद्भुत श्रमजलभरापूर्ण वपुषोः।
सुखस्पर्शनामीलितनयनयोः शीतमतुलं,
कदा कुर्त्यां संवीजन महह राधा मुरभिदोः।।१६६॥

अहो ! श्रीयमुनातीरवर्ति नवलता मन्दिरांगण में कन्दर्प क्रीडाजनित श्रमजल प्रवाह पूर्णतनु, सुखस्पर्श से आमीलित नयन श्रीराधाकृष्ण का अतुल शीतसंवीजन मैं कब करूँगी ? ॥१६६॥

क्षणं मधुरगानतःक्षणममन्दहिन्दोलतः,
क्षणं कुसुम वायुतः सुरतकेलिशिल्पैःक्षणम्।
अहो मधुरसद्रस प्रणयकेलि वृन्दावने,
विदग्धवरनागरी रसिकशेखरौ खेलतः॥१६७॥

अहो ! मधुर सद्रस का प्रणय केलिमय श्रीवृन्दावन में विदग्धवर नागरी श्रीराधा, रसिकशेखर श्रीकृष्ण, मधुर गान कर, अमन्द हिन्दोला में झूलकर, कुसुम मारुति का सेवन कर एवं कन्दर्पकेलि नेपुण्य का प्रकाश कर क्रीडा कर रहे हैं।।१६७॥

अद्य श्याम किशोरमौलि रहह प्राप्तोरजन्यामुखे,
नीत्वा त्वां करयोः प्रगृह्य सहसा नीपाटवीं प्राविशत्।
श्रोष्येतल्पमिलन्महारतिभरे प्राप्तेऽपि शीत्कारितं,
तद् वीचि सुखतर्जनं किमु हरेः स्वश्रोत्ररन्ध्राश्रितम्॥१६८॥

अहो ! अद्य रजनी मुख में (प्रदोष में) श्यामकिशोरमौलि श्रीकृष्ण, श्रीराधा के कर-युगल को धारणकर सहसा कदम्ब कानन में प्रविष्ट हो गये, वहाँ केलितल्प में निलित महारतिभर प्राप्त होने से श्रीकृष्ण के श्रवण पदवीगत सुख तरंग तर्जनरूप सीत्कार का श्रवण क्या मैं कर सकूँगी ? ॥१६८॥

श्रीमद्राधे त्वमथ मधुरं श्रीयशोदा कुमारे,
प्राप्ते कैशोरकमतिरसाद् वल्गसे साधुयोगम्।
इत्थं वाले महसि कथया नित्यलीला वयः श्री,
जातावेशा प्रकट सहजा किन्नुदृश्या किशोरी॥१६९॥

श्रीयशोदानन्दन श्रीकृष्ण कैशोरत्व प्राप्त होने से, हे श्रीमती राधे ! आपने भी रसाधिक्य के कारण उस मधुर साधुयोग को शीघ्र प्राप्त किया है, इस प्रकार कहने से, कोमल कान्ति श्रीकृष्ण में जिनका आवेश नित्यलीलावयः श्री के द्वारा हुआ है, वह प्रकट सहजा किशोरी क्या मेरे नयनगोचरीभूता होंगी ? ||१६९॥

एकं काञ्चन चम्पकच्छविपरं नीलाम्बुदश्यामलं,
कन्दर्पोत्तरलं तथैकमपरं नैवानुकूलं वहिः।
किञ्चैकं बहुमानभङ्गिरसवच्चाटुनि कुर्बत् परं,
पश्य क्रीड़ति कुञ्ज सीम्नि तदहो द्वन्द्वं महामोहनम्॥१७०॥

अहो! केलिकुञ्ज सीमा में एकजन कांचनचम्पकद्युति, अपरजन, नीलाम्बुदश्यामल, एकजन द्वारा चंचलीकृत अपरजन, वाह्यत प्रतिकूल, एकजन बहुमानभंगी, अपरजन, सरस चाटुकारी, इस प्रकार महामोहन युगल का क्या मैं दर्शन कर सकूँगी ? ॥१७०॥

विचित्ररति विक्रमं दधदनुक्रमादाकुलं,
महामदन वेगतो निभृतमञ्जुकुञ्जोदरे।
अहो विनिमयन्नवं किमपि नीलपीत पटं,
मिथो मिलितमद्भुतं जयति पीतनीलं महः ॥१७१ ॥

अहो ! निभृत मंजुकुंजाभ्यन्तरे महामदनवेशे आकुल अनुक्रमे विचित्र रतिविक्रमधारी अभिनव नीलपीत वसन विनिमयकारी एवं परस्पर सन्मिलित अद्भुत पीतनील महः श्रीराधाकृष्ण जययुक्त हो रहे हैं।।१७१॥

करे कमलमद्भुतं भ्रमरतोर्मिथोऽसार्पित,
स्फुरत् पुलक दोलतायुगलयोः स्मरोन्मत्तयोः।
सहासरसपेशलं मदकरीन्द्रभङ्गीशतै-
र्गतिं रसिकयोर्द्वयोः स्मरत चारुवृन्दावने॥१७२॥

चारु श्रीवृन्दावन में हस्त द्वारा अद्भुत कमल भ्रमणकारी एवं परस्पर के स्कन्ध में पुलकित भुजलताद्वय अर्पणकारी, कन्दर्पोन्मत्त रसिक युगल की सहास्य रसपेशल मदकरीन्द्र की शतभंगीतुल्य गति का स्मरण तुम सब करो॥१७२॥

खेलन्मुग्धाक्षिमीनस्फुरदधरमणीविद्रुमश्रोणिभार,
द्वीपायामोत्तरङ्गस्मरकलभकटाटोपवक्षोरुहायाः।
गम्भीरावर्त्तनाभेर्बहुलहरिमहाप्रेमपीयूषसिन्धोः,
श्रीराधायाः पदाम्भोरुहपरिचरणे योग्यतामेव गेषे॥१७३॥

जिनके मुग्ध नयनयुगल, मीनवत् चंचल, अधरपुट, मणिविद्रुम के समान उज्ज्वल, विपुल नितम्बरूप द्वीप में असाधारण कन्दर्प करभ के कुम्भद्वय के समान वक्षोज युगल, गम्भीरावर्त नाभिदेश है एवं जो बहुल श्रीकृष्णप्रेमामृत का महासिन्धु हैं, उन श्रीराधा के चरणकमल सम्बाहन करने का योग्यता का अन्वेषण मैं करती हूँ॥१७३॥

विच्छेदाभासमात्रादहह निमिषतो गात्रविस्रंसनादौ,
दिप्यत् कल्पाग्नि कोटिज्वलितमिव भवेद् वाह्यमभ्यन्तरं च,
गाढ़स्नेहानुवद्ध ग्रथितमिव वयोरद्भुत प्रेममूर्त्योः,
श्रीराधामाधवाख्यं परमिह मधुरं तद् द्वयं धामजाने॥१७४।।

अहो ! जो देह धर्मादि में निमेषमात्र विच्छेदाभास को मानकर वाह्य अभ्यन्तर में ज्वलन्त कोटि प्रलयाग्नि की ज्वाला का अनुभव करते हैं, उन अद्भुत प्रेममूर्ति युगल का गाढ़ स्नेहानुबन्ध ग्रथितवत् मधुर श्रीराधामाधवाख्य परम धामद्वय को मैं अवगत हो रही हूँ॥१७४॥

कदारत्युन्मुक्तं कचभरमहं संयमयिता,
कदा वा संधास्ये त्रुटितनवमुक्तावलिमपि।
कदा वा कस्तूर्यास्तिलकमपि भूयोरचयिता,
निकुञ्जान्तवृत्ते नवरतिरणे यौवत मणेः ॥१७५॥

निकुञ्जाभ्यन्तरे यौवनमणि श्रीराधा के उन्मुक्त केशापाश का बन्धन कब करूँगी। छिन्नमुक्त माला का ग्रन्थन कब करूँगी एवं कस्तूरीपंक के द्वारा पुनर्वार तिलक रचना कब करूँगी॥१७५॥

किं ब्रूमोऽन्यत्र कुण्ठीकृतकजनपदे धाम्न्यपि श्रीवैकुण्ठे,
राधामाधुर्यवेत्ता मधुपतिरथ तन्माधुरीं वेत्ति राधा।
वृन्दारण्यस्थलीयं परमरससुधामाधुरीणां धुरीणा,
तद् द्वन्द्वं स्वादनीयं सकलमपि ददौ राधिकाकिङ्करीणाम्॥१७६॥

अन्य बात तो क्या ? श्रीवैकुण्ठधाम को भी जो कि कुण्ठित किया है, इस प्रकार जनपद में मधुपति श्रीकृष्ण, श्रीराधामाधुर्य्यवेत्ता हैं और श्रीराधा ही मधुपति माधुर्य्यवेत्री हैं, इस परम रससुधा माधुरी धुरीण श्रीवृन्दारण्यस्थली, श्रीराधिका किंकरीगण को उभय का आस्वादनीय समस्त वस्तु प्रदान करती हैं।।१७६।।

लसद्वदन पङ्कजा नवगभीर नाभिभ्रमा,
नितम्ब पुलिनोल्लसन्मुखर काञ्चिकादम्बिनी।
विशुद्ध रसवाहिणीरसिकसिन्धुसङ्गोन्मदा,
सदा सुरतरङ्गिणी जयति क्वापि वृन्दावने॥१७७॥

श्रीवृन्दावन में प्रफुल्ल वदनकमला, नवीन व सुगंभीर आवर्त्त विशिष्टा नाभि, नितम्ब पुलिनशोभि मुखरकाञ्चि कादम्बिनीयुक्ता, विशुद्ध रसवाहिनी एवं रसिक सिन्धुसंगम हेतु उन्मादिनी, अनिर्वचनीया सुरतरंगिणी सर्वदा सर्वोत्कर्ष के साथ विराजित हैं।।१७७॥

अनङ्ग नवरङ्गिणी रसतरङ्गिणी सङ्गता,
दधत् सुखसुधामये स्वतनुनीरधौ राधिकाम्।
अहो मधुपकाकली मधुरमाधवीमण्डपे,
स्मरक्षुभित मेधते सुरतसीधुमत्तंमहः॥१७८॥

अहो ! मधुर मधुप झंकृत माधवी मण्डप में क्षुभित व कन्दर्पकेलि रसोन्मत्त श्यामसुन्दर, सुखसुधामय निज तनु जलधि में अनंग नवरंगिणी रसतरंगिणी रूप में मिलिता श्रीराधिका को अवलम्बन कर वर्द्धित हो रहे हैं।।१७८॥

रोमाली मिहिरात्मजा सुललितेबन्धुकबन्धुप्रभा,
सर्वाङ्गे स्फुटचम्पकच्छविरहो नाभीसरः शोभना।
वक्षोजस्तवकालसद्भुजलता शिञ्जापतच्छुकृतिः,
श्रीराधाहरते मनो मधुपतेरन्येव वृन्दाटवी॥१७९॥

अहो ! जिनकी रोमावली यमुना के समान है, बन्धक बन्धुर चन्द्र के समान जिनकी अंगप्रभा, जिनके सुललित सर्वांग से प्रफुल्ल चम्पककान्ति विच्छुरित होती रहती है, जिनकी सरसी शोभना नाभि है, वक्षोज स्तवक के सदृश हैं, शोभायमान् भुजद्वय लतास्वरूप एवं जिनके भूषण शब्द विहंग की कलध्वनि तुल्य हैं, वह वृन्दाटवी तुल्या श्रीराधा मधुपति श्रीकृष्ण के चित्त को हरण कर रही हैं।।१७९॥

राधामाधवयो विचित्रसुरतारम्भे निकुञ्जोदरे,
सस्तप्रस्तरसङ्गतैर्वपुरलङ्कुर्वेऽङ्गरागैः कदा।

तत्रैव त्रुटिताः सजो निपतिताः सन्धाय भूयः कदा,
कण्ठे धारयितास्मि मार्जनकृते प्रातः प्रविष्टास्म्यहम्॥१८०॥

प्रात:काल में सम्मान के निमित्त निकुंज मन्दिर के मध्य में प्रविष्ट होकर, श्रीराधामाधव के विचित्र सुरतारम्भ से सस्त पल्लवादि विरचित शय्या में संलग्न अंगराग के द्वारा निज अंग को मैं कब भूषित करूँगी एवं उस स्थान में छिन्न एवं निपतित पुष्पमाला को पून:-पुनः ग्रन्थन कर कब मैं कण्ठ में धारण करूँगी? ॥१८०॥

श्लोकान् प्रेष्ठयशोऽङ्कितान् गृहशुकानध्यापयेत् कर्हिचिद्,
गुञ्जामञ्जुलहार वर्ह मुकुटं निर्माति काले क्वचित्।
आलिख्यप्रियमूर्त्तिमाकुलकुचौ संघट्टयेद्वा कदा,
प्येवं व्यापृतिभिर्दिनं नयति मे राधाप्रियस्वामिनी।।१८१॥

प्रिय स्वामिनी श्रीराधा प्रिय विरह से व्याकुल होकर गह शुक को प्रिय यशोङ्कित श्लोकावली का अध्ययन करा रही हैं एवं कभी एकान्त में अवस्थित होकर सुन्दर गुजाहार, मयूर पिञ्छ की मुकुट रचना कर रही हैं एवं कभी प्रियतम की मूर्ति का अंकन कर निहार रही हैं, इस प्रकारचेष्टा से दिन यापन कर रही हैं।।१८१।।

प्रेयः सङ्गसुधा सदानुभवनि भूयो भवद्भाविनी,
लीलापञ्चमरागिणी रतिकलाभङ्गीशतोद्भाविनी।
कारुण्याद् द्रवभाविनी कटितटे काञ्चीकलाराविणी,
श्रीराचैव गतिर्ममास्तुपदयोः प्रेमामृतस्राविणी॥१८२॥

सर्वदा प्रियसंगसुधानुभवकारिणी, पुन:-पुनः भविष्यद् भाविनी, लीला पंचमरागिणी, रतिकला में शतशत भंगी उद्भावन कारिणी, कारुण्य द्रवभाविनी, कटितट में काञ्चीकला शब्दकारिणी एवं पद युगल में प्रेमामृत स्राविणी श्रीराधा ही मेरी गति हो॥१८२॥

कोटीन्दुच्छविहासिनी नवसुधासम्भारसंभाषिणी,
वक्षोजद्वितयेन हेमकलसश्रीगर्वनिर्वासिनी।
चित्रग्रामनिवासिनी नवनवप्रेमोत्सवोल्लासिनी,
वृन्दारण्य विलासिनी किमुरहोभूयाद्हृदुल्लासिनी॥१८३॥

कोटिचन्द्र प्रभाविहासिनी, नवसुधासम्भार सम्भाषिणी, पयोधर युगल द्वारा कनककुम्भ श्रीगर्वनिर्वाशिनी, चित्रग्राम निवासिनी, नव-नव प्रेमोत्सव उल्लासिनी वृन्दावन विलासिनी श्रीराधा क्या सेवा प्रदान के द्वारा मुझे आनन्दित करेंगी? ॥१८३।।

कदा गोविन्दाराधनगलित्तताम्बूलशकलं,
मुदा स्वादं स्वादं पुलकिततनु में प्रियसखी।
दुकूलेनोन्मीलन्नवकमलकिजल्करुचिना,
निवीताङ्गी सङ्गीतकनिजकला: शिक्षयति माम्॥१८४॥

प्रफुल्ल नवकमलरुचि दुकूल के द्वारा अंग को आवृत्त कर एवं गोविन्दाराधनान्तर ललित ताम्बूल खण्ड का आस्वादन करते-करते आनन्द से पुलकित होकर मेरी प्रियसखी कब मुझे संगीत नाट्य की शिक्षा प्रदान करेंगी ? ॥१८४॥

लसद्दशन मौक्तिकप्रवरकान्तिपूरस्फुर-
न्मनोज्ञनवपल्लवाधरमणिच्छटासुन्दरम्।
चरन्मकरकुण्डलं चकितचारुनेत्राञ्चलं,
स्मरामि तव राधिके वदनमण्डलं निर्मलम्॥१८५॥

हे श्रीराधिके ! आपका वदनमण्डल, शोभायमान् दशनमुक्तावलि की कान्ति प्रवाह के द्वारा स्फुरित सुचारु नवपल्लवाधरमणिच्छटा के द्वारा पूर्णप्रेमामृत रससमुल्लास सौभाग्यसारं पूर्णप्रेमा एव अमृतरसः तेन समुल्लासः एव सौभाग्यसारं यस्मिंस्तत्, कुञ्जकुञ्ज सुन्दर है, उसमें मकरकुण्डल शोभित है एवं चारुनेत्रांचल चकित हैं, उन निर्मल वदनमण्डल का स्मरण मैं करती हूँ।।१८५।।

चलत् कुटिलकुन्तलं तिलकं शोभिभालस्थलं,
तिलप्रसवनासिकापुटविराजिमुक्ताफलम्।
कलङ्करहितामृतच्छविसमुज्ज्वलं राधिके,
तवातिरति पेशलं वदनमण्डलं भावये॥१८६॥

हे श्रीराधिके ! आपके जिस वदनमण्डल में कुंचित अलकावलि चंचलीकृत, भालस्थल में तिलक सुशोभित, तिल फूल सदृश नासिका में मुक्ताफल विराजित है एवं जो कलंक रहित अमृतच्छवि के द्वारा समुज्ज्वल है, उस प्रीत्याधिक्य हेतु सुन्दर वदनमण्डल की भावना मैं करती हूँ॥१८६॥

पूर्णप्रेमामृतरससमुल्लाससौभाग्यसारं,
कुञ्ज कुजे नवरतिकलाकौतुकेनात्तकेलि।
उत्फुल्लेन्दीवरकनकयोः कान्तिचौरं किशोरं,
ज्योतिर्द्वन्द्वं किमपि परमानन्दकन्दं चकास्ति ।॥१८७॥

जिनमें पूर्णप्रेमरूप अमृत रस के द्वारा समुल्लासरूप सौभाग्यसार विद्यमान है, जो नवरतिकला कौतुक में, कुञ्ज-कुञ्ज में केलि परायण हैं, जो-जो प्रफुल्ल इन्दीवर कनककमल की कान्ति के अपहरणकारी हैं, वे किशोराकृति ज्योतिः युगल, अनिर्वचनीय परमानन्दकन्दस्वरूप में शोभित हैं।।१८७॥

ययोन्मीलत् केलीविलसित कटाक्षैक कलया,
कृतोवन्दी वृन्दाविपिनकलभेन्द्रोमदकलः।
जड़ीभूतः क्रीड़ामृग इव यदाज्ञालवकृते,
कृती नः सा राधा शिथिलयतु साधारणगतिम्॥१८८॥

जिनकी उन्मीलित केलिविलसित कटाक्ष की एक कला के द्वारा मदकल वृन्दावन करभेन्द्र श्रीकृष्ण भी वशीभूत होते हैं एवं जिनकी आज्ञा लेशमात्र से कृतार्थ होकर भी क्रीडामृग के समान रहते हैं, वे श्रीराधा हमारी साधारण गति को शिथिल करें।।१८८॥

श्रीगोपेन्द्रकुमारमोहनमहाविद्येस्फुरन्माधुरी,
सारस्फाररसाम्बुराशिसहजप्रस्यन्दिनेत्राञ्चले।
कारुण्याकटाक्षभङ्गिमधुरस्मेराननाम्भोरुहे,
हा हा स्वामिनि राधिके मयि कृपादृष्टिं मनाङ्क्षिप॥१८९॥

हे नन्दनन्दन के मोहनार्थ महाविद्यारूपे ! हे स्फुरित माधुरी सारविस्तारो रससमुद्र के सहज प्रस्यन्दि नेत्रांजले ! हे करुणार्द्र कटाक्षभङ्गि ! हे मधुर स्मेराननकमले ! हे स्वामिनी ! हे श्रीराधिके ! मेरे प्रति कृपादृष्टि प्रदान करो॥१८९॥

ओष्ठप्रान्तोच्छलित दयितोद्गीर्णताम्बुलरागा,
रागानुच्चैर्निजरचितया चित्रभङ्ग्योन्यन्ती।
तिर्यग् ग्रीवा रुचिररुचिरोदञ्चदाकुञ्चितभ्रूः,
प्रेयः पार्श्वे विपलपलकैर्मण्डिता भाति राधा॥१९॥

जिनके ओष्ठप्रान्त में दयित श्रीकृष्ण के मुखोद्गीर्ण ताम्बूलराग उच्छलित है, जो निज रचित चित्रभङ्गी वीणा के द्वारा उच्चस्वर से ललितादि राग आलाप कर रही हैं, जिनकी ग्रीवा वक्रीभूता है, रुचिर से रुचिततर रूप में उत्क्षेप हेतु जिनके भ्रूदेश आकुञ्चित है, उन श्रीराधा प्रियतम के निकट में विपुल पुलक से विमण्डित होकर शोभित हैं।।१९०॥

किं रे धूर्त प्रवरनिकटं यासि नः प्राणसख्या,
नूनं वाला कुचतटकरस्पर्शमात्राद् विमुह्येत्।
इत्थं राधे पथि पथि रसान्नागरं तेऽनुलग्नं,
क्षिप्त्वाभङ्ग्याहृदयमुभयोः कर्हि संमोहयिष्ये ॥१९१॥

हे धूर्तराज ! हमारी प्राणसखी श्रीराधा के निकट क्यों जा रह हो ? कुचतट स्पर्शमात्र से ही वालायें मोहित हो जाती हैं। हे श्रीराधे ! इस प्रकार वाग्वैदग्धी के द्वारा आपके अनुगामी रसिक नागर को अपसारित कर कब मैं आप दोनों के हृदय को मुग्ध करूँगी॥१९१॥

कदा वा राधायाः पदकमलमायोज्य हृदये,
दयेशं निःशेषं निरतमिह जह्यामुपविधिम्।
कदा वा गोविन्दः सकलसुखदः प्रेमकरणा-
दनन्ये धन्ये वै स्वयमुपनयेत स्मरकलाम्॥१९२॥

उद्दीप्त कन्दर्प युद्ध का विक्रमावेग के निमित्त उद्गत स्वेदजल से जिनके तनुयुगल, आर्दोभूत, शिथिल तथा विचित्र रूप धारण किया है, वे श्रीराधा रसिकतिलक कुंज द्वार में समासीन होने से कब मैं उन दोनों को सुखसेव्य व्यजन कर सुकृतिनी बनूँगी ? ॥१९२॥

कदा वा प्रोद्दामस्मरसमरसंरम्भरभस,
प्ररूढस्वेदाम्भः पुतलुलितचित्राखिलातनू।
गतौ कुञ्जद्वारे सुखमारुति संबीज्यपरया,
मुदाहं श्रीराधारसिकतिलकौ स्यां सुकृतिनी॥१९३॥

उद्दीप्त कन्दर्प युद्ध के विक्रमावेग के निमित्त उद्गत स्वेदजल से जिनके तनुयुगल आर्द्राभूत, शिथिल एवं विचित्ररूप धारण किये हैं, वे श्रीराधा रसिकतिलक युगल कुञ्जद्वार में समासीन होने पर मैं कब उनका सुखसेव्य व्यजन कर सुकृतिनी बनूँगी ? ॥१९३॥

मिथः प्रेमावेशाद् घनपुलकदोर्वल्लिरचित,

प्रगाढ़ाश्लेषेणोत्सवरसभरोन्मीलितदृशौ।
निकुञ्जक्लृप्ते वै नवकुसुमतल्पेऽभिशयितौ,
कदा पत्संवाहादिभिरहमधीशौ नु सुखये॥१९४॥

निकुंजाभ्यन्तरस्थित नवकुसुमरचित शय्या में शयित एवं परस्पर प्रेमावेश जनित बहु पुलकाञ्चित भुजलता पाश से रचित आलिंगनोत्सव रसावेश से उन्मीलित दृष्टि अधिस्वामी युगल को पाद सम्बाहन के द्वारा मैं कब सुखी करूँगी॥१९४॥

मदारुण विलोचनं कनकदर्पकामोचनं,
महाप्रणयमाधुरीरसविलासनित्योत्सुकम्।
लसन्नववय:श्रिया ललितभङ्गिलीलामयं,
हृदा तदहमुद्वहे किमपि हेमगौरं महः।।१९५॥

जो शोभायमान् नववयः श्री द्वारा ललितभङ्गी लीलामय, महाप्रणय माधुरी रसविलास निमित्त नित्योत्सुक, मदारुण लोचन एवं कनक दर्पहारी हैं, उन अनिर्वचनीय हेमगौररूप को मैं हृदय में धारण करूँ॥१९५॥

मदा घूर्णन्नेत्रं नवरतिरसावेशविवशो-
ल्लसद् गात्रं प्राण:प्रणयपरिपाट्यां परतरम्।
मिथोगाढ़ाश्लेषाद्वलयमिव जातं मरकत,
द्रुतस्वर्णच्छायं स्फुरतु मिथुनं तन्मम हृदि ।।१९६॥

मानवरति रसावेश से जिनके अंग एवं प्राण उल्लसित हैं, प्रणय-परिपाटी से परस्पर हैं, परस्पर गाढ़ालिंगन में वलयाकार प्राप्त हैं, मदाघूर्णनेत्र हैं एवं मरकत तथा गलित सुवर्णकान्ति विशिष्ट श्रीयुगलरूप मेरे हृदय में स्फुरित हों॥१९६॥

परस्परं प्रेमरसे निमग्नमशेषसम्मोहनरूपकेलि।
वृन्दावनान्तर्नवकुञ्जगेहे तन्नीलपीतं मिथुनं चकास्ति ॥१९७॥

श्रीवृन्दावन के नवनिकुंज गृह में परस्पर प्रेमरस में निमग्ना एवं अशेष सम्मोहनरूप केलिविशिष्ट नीलपीत युगलरूप शोभा प्राप्त हो रहे हैं।।१९७॥

आशास्य दास्यं वृषभानुजाया स्तीरे समध्यास्य च भानुजाया:,
कदानु वृन्दावनकुञ्जवीथीष्वहंनु राधे ह्यतिथिर्भवेयम्॥१९८॥

हे श्रीराधे ! वृषभानुनन्दिनी ! आपके कैर्य लाभ की आकांक्षा कर तथा भानुजा यमुना के तीर में अध्यासीना होकर मैं कब श्रीवृन्दावन कुंज पथ की अतिथि बनूँगी ? ॥१९८॥

कालिन्दीतटकुञ्ज पुजीभूतं रसामृतं किमपि।
अद्भुत केलिनिधानं निरवधि राधाभिधानमुल्लसति॥१९९॥

कालिन्दीतट कुंज में अनिर्वचनीय पुंजीभूत रसामृतस्वरूप एवं निरवधि अद्भुत केलिनिधानस्वरूप श्रीराधा उल्लसित हैं।।१९९।।

प्रीतिरिव मूर्तिमती रससिन्धोः सारसम्पदिव विमला।

वैदग्धीनां हृदयं काचन वृन्दावनाधिकारिणी जयति॥२००।

मूर्त्तिमती प्रीति स्वरूपिणी, रससिन्धु श्रीकृष्ण के सार सम्पद के समान एवं विदग्धागणों की हृदयरूपा श्रीवृन्दावनाधीश्वरी सर्वोत्कर्ष के साथ विराजित हैं।॥२००॥

रसघनमोहनमूर्ति विचित्र केलिमहोत्सवोल्लसितम्।
राधाचरणविलोड़ितरुचिरशिखण्डं हरिं वन्दे ॥२०१॥

जो विचित्र केलि महोत्सव से उल्लसित हैं एवं जिनकी सुन्दर शिखिचूड़ा श्रीराधा के चरणों में इतस्ततः विलोड़ित है, उन रसधन मोहनमूर्ति श्रीहरि का मैं, भजन करती हूँ।।२०१॥

कदा गायं गायं मधुरमधुरीत्यामधुभिद-
श्चरित्राणि स्फारामृतरसविचित्राणि बहुशः।
मृजन्तीतत् केलीभवनमभिरामं मलयज-
च्छटाभिः सिञ्चन्ती रसहृदनिमग्नास्मि भविता॥२०२॥

श्रीकृष्ण के अभिराम केलि भवन को सम्मार्जित एवं मलयज च्छटा द्वारा अभिषिक्त करने के समय मधुभिद् श्रीकृष्ण की प्रचुरामृत रसविचित्र चरितगाथा का गान मधुरादपि मधुर रीति से करके कब मैं रसहृद में अपने को निमज्जित करूँगी? ॥२०२॥

उदञ्चद्रोमाञ्च प्रचयखचितां वेपथुमतीं,
दधानां श्रीराधामतिमधुरलीलामयतनुम्।
कदा वा कस्तूर्या किमपि रचयन्त्येव कुचयो,
विचित्रां पत्रालीमहमहह वीक्षे सुकृतिनी॥२०३॥

अहो ! कस्तूरी द्वारा वक्षोज युगल में अनिर्वचनीय विचित्रा पत्रावली की रचना कर सुकृतिनी होकर मैं कब उद्गतरोमाञ्च शोभिता कम्पान्विता, अति मधुर लीलामय तनुधारिणी श्रीराधा का दर्शन करूँगी ? ॥२०३॥

क्षणं शीत्कुर्वाणा क्षणमथ महावेपथुमती,
क्षणं श्यामश्यामेत्यमुमभिलपन्ती पुलकिता।
महाप्रेमा कापि प्रमदमदनोद्दामरसदा,
सदानन्दा मूर्ति जयति वृषभानोः कुलमणिः।।२०४॥

अनिर्वचनीय प्रमद मदनोद्दाम रसदा, महाप्रेमवती सदानन्दमूर्ति वृषभानुकुलमणि श्रीराधा कभी सीत्कार करती हैं तो कभी महाकम्पान्विता होती हैं कभी तो हे श्यामसुन्दर ! हे श्यामसुन्दर ! कहकर श्रीकृष्ण के साथ अभिलाप करते-करते पुलकिता होकर सर्वोत्कर्ष के साथ विराजित हैं॥२०४॥

यस्याः प्रेमघनाकृतेः पदनखज्योत्स्नाभरस्नापित,
स्वान्तानां समुदेति कापि सरसाभक्तिश्चमत्कारिणी।
सा मे गोकुलभूपनन्दनमनश्चोरी किशोरी कदा,
दास्यं दास्यति सर्ववेदशिरसां यत्तद्रहस्यं परम्।।२०५॥

जिनकी पदनखकौमुदी धारा से हृदय अभिषिक्त होने से अनिर्वचनीया चमत्कारिणी सरसा भक्ति उदित होती है, उन गोकुलेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण की मनोहरणकारिणी श्रीकिशोरीजी मुझे सर्ववेद शिरोमणि का परम रहस्य स्वरूप दास्यता प्रदान कब करेंगी ? ॥२०५॥

कामं तुलिकया करेण हरिणा यालक्तकैरङ्किता,
नानाकेलिविदग्धगोपरमणीवृन्दैस्तथावन्दिता।
या संगुप्ततयातथोपनिषदां हृद्येव विद्योतिते,
सा राधाचरणद्वयी ममगतिर्लास्यैक लीलामयी॥२०६॥

जो श्रीहरि के निज हस्त द्वारा इच्छानुरूप अलक्तक राग से रंजित हैं, जो विविध केलिकुशला गोपांगना समूह द्वारा वन्दित हैं एवं जो उपनिषद् समूह के हृदय में गुप्तभाव से विद्यमान हैं, वह नृत्यमात्र लीलामयी श्रीराधा के चरणद्वयी मेरी गति होवें॥२०६॥

सान्द्रप्रेमरसौघवर्षिणि नवोन्मीलन्महामाधुरी,
साम्राज्यैकधुरीणकेलिविभवद् कारुण्यकल्लोलिनि।
श्रीवृन्दावनचन्द्रचित्तहरिणीबन्धुस्फुरद्वागुरे,
श्रीराधे नवकुञ्जनागरी तव क्रीतास्मि दास्योत्सवैः।।२०७॥

हे निविड़-प्रेमरस प्रवाहवर्षिणी ! हे नवोन्मीलित महामाधुरी साम्राज्य की सर्वश्रेष्ठ केलिविभवयुक्त कारुण्य कल्लोलिनी ! हे श्रीवृन्दावनचन्द्र के चित्तकुरंग के बन्धनार्थ प्रकाश्य वागुरास्वरूपे! हे नवकुंजनागरि ! हे श्रीराधे ! मैं आपके दास्योत्सव के द्वारा क्रीत हूँ॥२०७॥

स्वेदापूरः कुसुमचयनै दूरतः कण्टकाङ्को,
वक्षोजेऽस्यास्तिलकविलयो हन्त धर्माम्भसैव।
ओष्ठः सख्या हिमपवनतः सव्रणो राधिके ते,
क्रूरास्वेवं स्वघटितमहो गोपये प्रेष्ठसङ्गम्।।२०८॥

अहो ! हे श्रीराधिके ! दूर से पुष्प चयन के कारण ही प्रियसखी का यह स्वेद प्रवाह है, वक्षोज में जो क्षत है, यह कण्टकाङ्क है । हाय ! धर्मजल से तिलक विलीन हुआ है और ओष्ठ में जो व्रण उद्गत हुआ है, वह हिमवायु स्पर्श से ही उद्भूत है, इस प्रकार से विपक्षगण के निकट आपके स्वयं कृतप्रियसंग को गोपन करूँगी।।२०८॥

पातं पातं पदकमलयोः कृष्णभृङ्गेण तस्याः,
स्मेरास्येन्दोर्मुकुलितकुचद्वन्द्वहेमारविन्दम्।
पीत्वावक्त्राम्बुजमतिरसान्नूनमन्तः प्रवेष्टु,
मत्यावेशान्नखरशिखया पाट्यमानं किमीक्षे॥२०९॥

पदकमल में पुनः-पुनः पतित होकर एवं अति रसहेतु मुखकमल का मधुपान कर अतिशय आवेश से अन्तःस्थल में प्रविष्ट होने के निमित्त श्रीकृष्णभृग, उन मधुर हास्ययुक्त चन्द्रमुखी के मुकुलित कुचयुगरूप कनक कमल को नखरशिखर द्वारा विदीर्ण कर रहे हैं, मैं क्या वह दर्शन करूँगी ? ॥२०९॥

अहो तेऽमी कुञ्जास्तदनुपमरासस्थलमिदं,
गिरिद्रोणी सैव स्फुरति रतिरङ्गे प्रणयिनी।

न वीक्षे श्रीराधां हरि हरि कुतोऽपीति शतधा,
विदीर्येत प्राणेश्वरि मम कदा हन्त हृदयम्।।२१०॥

वे सब कुंज, अनुपम रासस्थल एवं रतिरंग प्रणयिणी गिरिद्रोणी शोभित है, हरि हरि ! यदि कुत्रापि श्रीराधा का दर्शन न हो, हाय ! हे प्राणेश्वरि ! तब मेरा हृदय कब शतधा विदीर्ण होगा? ॥२१०॥

इहैवाभूत् कुजे नवरतिकला मोहनतनो,
रहो अत्रानृत्यद् दयित सहिता सा रसनिधिः।
इति स्मारं स्मारं तव चरितपीयूषलहरी,
कदा स्यां श्रीराधे चकित इह वृन्दावन भुवि।।२११॥

अहो, इस कुंज में उन मोहन तनु की नवरतिकला अनुष्ठित हुई थी, यहाँ रसनिधि प्राणकान्त के साथ नृत्य किया था। हे श्रीराधे ! एवम्भूत आपकी चरित पीयूष लहरी का पून:-पून:स्मरण कर इस वृन्दावन भूमि में कब मैं चमत्कृत होऊँगी? ॥२११॥

श्रीमद् बिम्बाधरे ते स्फुरति नवसुधामाधुरी सिन्धुकोटि-
र्नेत्रान्तस्ते विकीर्णाद्भुतकुसुमधनुश्चण्डसत्काण्डकोटिः।
श्रीवक्षोजे तवातिप्रमदरसकलासारसर्वस्वकोटिः,
श्रीराधे त्वत्पादाब्जात् स्त्रवति निरवधिप्रेमपीयूषकोटिः।।२१२॥

हे श्रीराधे ! आपके श्रीमदबिम्बाधर में नवसुधामाधुरी कोटि सिन्धु स्फूरित हो रहे हैं, नेत्रप्रान्त भाग से अद्भुत पुष्पधनु की प्रचण्डसत्काण्डकोटि विकीर्ण हो रही है, श्रीवक्षोज में अति प्रमद रसकला की सारसर्वस्व कोटि शोभित है एवं श्रीचरण-कमल से प्रेमसुधा की कोटि-कोटि धारा निरवधि नि:सृत हो रही है।।२१२॥

सान्द्रानन्दोन्मदरसघनप्रेमपीयूषमूर्तेः,
श्रीराधाया अथ मधुपतेः सुप्तयोः कुञ्जतल्पे।
कुर्वाणाहं मृदु मृदु पदाम्भोजसंवाहनानि,
शय्यान्ते किं किमपि पतिता प्राप्ततन्द्राभवेयम्॥२१३॥

निविड़ आनन्दोन्मदरसघन प्रेमपीयूषमूर्ति श्रीराधा मधुपति श्रीकृष्ण कुञ्ज तल्प में निद्रित होने से उनके पदकमलों का मृदु-मृदु सम्बाहन करते-करते मैं तन्द्राग्रस्त होकर क्या शय्यान्त में निपतिता होऊँगी? ॥२१३॥

राधापदारविन्दोच्छलितनवरसप्रेमपीयूषपुजे,
कालिन्दीकूलकुजे हृदि कलितमहोदारमाधुर्य्यभावः।
श्रीवृन्दारण्यवीथीललितरतिकलानागरी तां गरीयो,
गंभीरैकानुरागांमनसि परिचरन् विस्मृतान्यः कदा स्याम्।।२१४॥

जहाँ श्रीराधाचरण-कमल से उच्छलित नवरस प्रेमपीयूषपुंज विद्यमान है, उस कालिन्दीकूलकुंज में कब मैं हृदय में महोदार माधुर्य्यभाव ग्रहण कर उस गरीयान् गम्भीरैकानुरागवती श्रीवृन्दावनवीथीस्थिता ललित रतिकला समन्विता नागरी की मानसिकी परिचर्या करते-करते कब मैं आत्मविस्मृति हो जाऊँगी॥२१४॥

अदृष्ट्वा राधाङ्केनिमिषमपि तं नागरमणिं,
तया वा खेलन्तं ललितललितानङ्गकलया।

कदाहं दुःखाब्धौ सपदि पतितमूर्च्छितवती,
न तामाश्वास्यार्ता सुचिरमनुशोचेनिजदशाम् ।।२१५॥

श्रीराधा के साथ ललित कन्दर्प क्रीडा कौशल प्रकाश के समय नागरमणि श्रीकृष्ण को श्रीराधा के अंग में निमेषमात्र न देखकर मूर्च्छितवती मैं दुःखसागर में पतित होकर प्रिय वियोगार्ता को आश्वस्त करने का अवकाश प्राप्त कर उस अवस्था के लिए मेरी कब चिर अनुशोचना होगी ? ॥२१५॥

भूयोभूयः कमलनयने किं मुधावार्य्यतेऽसौ,
वाङ्मात्रेऽपि त्वदनुगमनं न त्यजत्येव धूर्त्तः।
किञ्चिद्राधे कलकुचतटी प्रान्तमस्यप्रदीय,
श्वक्षुरा तमनुपतितां चूर्णतामेतु चेतः॥२१६॥

हे कमलनयने ! हे श्रीराधे ! बारम्बार निवारण करना वृथा है, कारण धूर्त, कथा से आपका अनुगमन करना नहीं छोड़ेगा, अतएव ऐसा कुछ करो, जिससे उसके मृदुल चित्त चक्षु के द्वारा आपके वक्षोज प्रान्त में गिरकर चूर्ण हो जाय॥२१६।।

किंवा नस्तैः सुशास्त्रैः किमथ तदुदितै वर्त्मभिःसद्गृहीतै-
र्यत्रास्ति प्रेममूर्तेनहि महिमसुधा नापि भावस्तदीयः।
किंवा वैकुण्ठलक्ष्म्याप्यहह परमया यत्र मे नास्ति राधा,
किन्त्वाशाप्यस्तु वृन्दावनभुवि मधुरा कोटिजन्मान्तरेऽपि॥२१७॥

जहाँ प्रेममूर्ति श्रीराधा की महिमासुधा का तदीयभाव वर्तमान नहीं, उस प्रकार सुशास्त्र समूह अथवा उस शास्त्रविहित साधुजन गृहीत वर्त्मसमूह का भी क्या प्रयोजन है ? अहो ! जहाँ श्रीराधा नहीं हैं, उस परमा वैकुण्ठ प्रीति से भी क्या प्रयोजन है ? किन्तु कोटि जन्मान्तर में भी श्रीवृन्दावन भूमि के प्रति मेरी मधुरा अभिलाषा हो॥२१७॥

श्यामश्यामेत्यनुपमरसापूर्णवर्णैर्जपन्ती,
स्थित्वा स्थित्वा मधुरमधुरोत्तारमुच्चारयन्ती।
मुक्तास्थूलान्नयनगलितानश्रुविदून बहन्ती,
हृष्यद्रोमा प्रतिपद चमत्कुर्वती पातु राधा॥२१८॥

जो अनुपम रसपूर्ण वर्ण के साथ बारम्बार 'श्याम-श्याम' जप करती रहती हैं, रुक-रुककर मधुर से भी मधुर स्वर का उच्चारण कर रही हैं, जिनके नयनों से स्थूलमुक्ता की मोती अश्रुबिन्दु निर्गत हो रही है, जो आनन्द से पुलकित हैं एवं प्रतिपद में ही चमत्कारवती हैं, वे श्रीराधा हमारी रक्षा करें।।२१८॥

ताद्दङ्मूर्ति ब्रजपतिसुतः पादयो में पतित्वा,
दन्ताग्रेणाथ धृततृणकं काकुवादान् ब्रवीति।
नित्यं चानुब्रजति कुरुते सङ्गमायोद्यम,
केत्युद्वेगं मे प्रणयिनि किमावेदयेयं नु राधे॥२१९॥

हे प्रणयिणी ! हे श्रीराधे ! आपको रुष्टा जानकर मोहनमूर्ति ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण मेरे चरणों में गिरकर एवं दशनों में तृण धारण कर विनती करते-करते पश्चात् गमन करते रहेंगे, उद्देश्य है कि मैं मिलन सम्पादन हेतु उद्यम करूँ, किन्तु उस आचरण से दुःखी होकर मैं उद्वेग का निवेदन आपसे करूँगी क्या ? ॥२१९॥

चलल्लीलागत्या क्वचिदनुचलद्धंसमिथुनं,
क्वचिद् केकिन्यग्रे कृतनटनचन्द्रकयनुकृति।
लताश्लिष्टं शाखिप्रवरमनुकुर्वत् क्वचिदहो,
विदग्धद्वन्द्वं तद्रमत इह वृन्दावन भुवि ।।२२०॥

अहो ! वे विदग्धयुगल इस श्रीवृन्दावन में कहीं पर लीलागति के द्वारा गमनशील हंसमिथुन का अनुसरण कर किसी स्थान पर मयूरी के सामने मयूर की नृत्यभंगी का अनुकरण कर कहीं पर लताश्लिष्ट तरुवर का अनुकरण कर क्रीड़ा कर रहे हैं।।२२०॥

व्याकोशेन्दीवरमथ रुचा हारिहेमारविन्दं,
कालिन्दीयं सुरभिमनिलं शीतलं सेवमानम्।
सान्द्रानन्दं नवनवरसं प्रोल्लसत् केलिवृन्द,
ज्योतिर्द्वन्द्वं मधुरमधुरं प्रेमकन्दं चकास्ति।।२२१॥

विकसित नीलकमल एवं स्वर्णकमल की कान्तिहरणकारी श्रीयमुना की सुरभि शीतल पवनसेवी सान्द्रानन्द, नव-नव रसविशिष्ट, उल्लसित केलिवृन्दयुक्त, मधुरादपि मधुर प्रेमकन्द ज्योतिर्द्वन्द्व शोभित हो रहे हैं।।२२१॥

कदा मधुरसारिकाः स्वरसपद्यमध्यापयत्,
प्रदाय करतालिकाः क्वचन नर्त्तयत् केकिनम्।
क्वचिद् कनकवल्लरी वृततमाललीलाधनं,
विदग्धमिथुनं तदद्भुतमुदेति वृन्दावने॥२२२॥

कभी मधुरस्वरा सारिकागण को स्वकीय रसमयी गाथा सिखाते हैं, कभी करतालि देकर मयूर को नचा रहे हैं, कहीं पर कनकलतावृत तमाल के लीलारत्न की भाँति अदभूत विदग्धयुगल श्रीवृन्दावन में शोभित हैं।।२२२॥

पत्रालिं ललितां कपोल फलके नेत्राम्बुजेकज्ज्वलं,
रङ्ग बिम्बफलाधरे च कुचयोः काश्मीरजा लेपनम्।
श्रीराधे नवसङ्गमाय तरले पदाङ्गुलीपङ्क्तिषु,
न्यस्यन्ती प्रणयादलक्तकरसं पूर्णा कदा स्यामहम्॥२२३॥

हे श्रीराधे ! मैं आपके कपोल फलकमें मनोहर पत्राली की रचना कर एवं नयनकमल में मनोहर पत्राली की रचना कर, नयनकमल में कज्जल, बिम्बाफलाधर में ताम्बुलराग, वक्षोजयुगल में कुंकुमपंकानुलेपन कर एवं हे नवसंगमार्थ तरले ! अतिशय प्रीति से आपकी पदांगुली में अलक्तकरस रंजित कर कब मैं पूर्ण मनोरथ हो जाऊँगी॥२२३॥

श्रीगोवर्द्धन एक एवभवता पाणौ प्रयत्नाद्धृतः,
श्रीराधातनुहेमशैलयुगले दृष्टेऽपि ते स्याद्भयम्।
तद् गोपेन्द्रकुमार मा कुरु वृथा सर्वं परीहासतः,

कह्येवं वृषभानुनन्दिनि तव प्रेयांसमाभाषये ॥२२४॥

गोपेन्द्रकुमार ! आपने एकबार मात्र ही श्रीगोवर्द्धन शैल का धारण अति यत्नपूर्वक हाथ से किया था, किन्तु श्रीराधा के वक्ष:स्थल में कनकशैल युगल को देखकर शंकित हो रहे हो, अतएव परिहास के च्छल से वृथा गर्व न करो, हे वृषभानुनन्दिनी ! मैं इस प्रकार निवेदन कब आपके प्रियतम से करूँगी ? ॥२२४॥

अनङ्गजयमङ्गलध्वनितकिङ्किणी डिण्डिमः,
स्तनादि वरताड़नैर्नखरदन्तघातैर्युतः।

अहो चतुर नागरी नवकिशोरयोर्मजुले,
निकुञ्ज निलयाजिरे रतिरणोत्सवोजृम्भते॥२२५॥

अहो ! मंजुल निकुंज गृहांगणे विदग्ध नागरी नवकिशोर के कन्दर्प जयमंगल ध्वनित किंकिणी शब्द, वक्षोजादिका वरताड़न, नखरदन्ताघातयुक्त रतिरणोत्सव प्रकाशित हो रहा है।।२२५॥

यूनोर्वीक्ष्य दरत्रपानटकला मदीक्षयन्ती दृशौ,
वृण्वाना चकितेन सञ्चितमहारत्नस्तमं चापुयरः।
सा काचिद वृषभानु वेश्मनि सखीमालास वालावली,
मौलिः खेलति विश्वमोहनमहासारूप्यमाचिन्वती॥२२६॥

अनिर्वचनीया बालागणों के शिरोभूषणरत्न, युवक युवतियों की ईषत् लज्जारूप नटकला को प्रकट कर नयनद्वय को सर्वतोभाव से दीक्षित कराकर चमत्कृत चित्त से महारत्नरूप वक्षोजयुगल को आवृत कर एवं विश्वविमोहन का महासारूप्य का संचय कर वृषभानु भवन से सखीगण के मध्य में क्रीड़ा परायण हैं।।२२६।।

ज्योतिः पुजद्वयमिदमहोमण्डलाकारमस्या,
वक्षस्युन्मादयदि हृदयं किं फलत्यन्यदग्रे।
भ्रूकोदण्डं नकृतघटनं सत् कटाक्षौघवाणैः,
प्राणान् हन्यात् किमु परमतो भाविभूयो न जाने॥२२७॥

आहा, इनके वक्ष:स्थल में गोलाकार ज्योति:पुंजद्वय ही मेरे हृदय को उन्मत्त कर रहा है, सम्प्रति इसके अग्रे एतदपेक्षा भी अधिक फल क्या हो सकता है, देखना चाहिए ? अहो ! सत्कटाक्ष प्रवाहरूप तीक्ष्णशर समूह भ्रूधनु के साथ संयुक्त न होकर भी प्राणनाश कर रहे हैं। अत:पर बारम्बार संयोग होने से क्या होगा मैं नहीं जानता हूँ।।२२७॥

भोः श्रीदामन् सुवलवृषभस्तोककृष्णार्जुनाद्याः,
किं वो दृष्टं मम नु चकिता दृग्गता नैव कुजे।
काचिद्देवी सकल भुवनाप्लावि लावण्यपुरा,
दूरादेवाखिलमहरत प्रेयसो वस्तुसख्युः।।२२८॥

हे श्रीदाम, सुबल, वृषभ, स्तोककृष्ण, अर्जुनादि सखावृन्द! तुम सभी ने क्या देखा होगा ? मेरी चकिता दृष्टि कुंज में प्रविष्ट न होने पर भी मैंने क्या देखा वह कहती हूँ सुनो, निखिलभुवन प्लाविलावण्यमयी एक देवी दूर से ही प्रियसखा की अखिल वस्तु का अपहरण कर रही है।।२२८॥

गता दूरे गावो दिनमपि तुरीयांशमभजद्,

वयं यातुं क्षान्तास्तव च जननी वर्त्मनयना।
अकस्मात्तुष्णीके सजलनयने दीनवदने,
लुठत्यस्यां भूमौ त्वयि नहि वयं प्राणिनिषदः।।२२९॥

गो समूह अति दूर में चली गयी हैं, दिवस भी अवसान प्राय है, हम सभी गो समूह को लेकर गृह को जाने, के लिए प्रस्तुत हो गये हैं, तुम्हारी वर्त्मनयना जननी अकस्मात् इस भूमि में आकर निर्वाक् सजल नयन, दीनवदन से लुण्ठन कर रही हैं, हम सभी प्राण धारण की इच्छा भी नहीं करते हैं।।२२९।।

नासाग्रे नवमौक्तिकं सुरुचिरं स्वर्णोज्ज्वलं विभ्रती,
नानाभङ्गीरनगरङ्गविलसल्लीलातरङ्गावली।
राधे त्वं प्रविलोभय ब्रजमणिं रत्नच्छटा मञ्जरी,
चित्रोदञ्चित कञ्चु कस्थगितयोर्वक्षोजयोःशोभया।।२३०॥

हे श्रीराधे ! आप नासाग्र में सुरुचिर स्वर्णोज्ज्वल नवमौक्तिकधारिणी हैं, नानाभंगि विशिष्ट अनंगरंग लीलातरंगावली विलासिनी हैं, आप रत्नच्छटा मंजरी समन्वित अर्द्धभाग चित्रयुक्त कंचुक द्वारा आवृत वक्षोज युगल की शोभा से ब्रजमणि श्रीकृष्ण को सम्यक् प्रकार से प्रलुब्ध करो॥२३०॥

अप्रेक्षेकृतनिश्चयापि सुचिरं वीक्षेत दृक्कोणतो,
मौने दाढ्यमुपाश्रितापि निगदेत्तामेव याहीत्यहो।
अस्पर्शे सुधृताशयापि करयो धृत्वा वहिर्यापये-
द्राधाया इति मान दुःस्थितिमहं प्रेक्षे हसन्ती कदा॥२३१॥

अदर्शन में कृतनिश्चया होकर भी बहुक्षण से नयनकोण से दर्शन करती रहती हैं, मौन में दृढता अवलम्बन करके भी अहो ! उनके निकट जाओ, इस प्रकार वाक्य का प्रयोग कर रही हैं एवं स्पर्श नहीं करूँगी, इस प्रकार दृढ संकल्प करके भी श्रीकृष्ण के हस्तद्वय को धारण कर उनको कुंज से बाहर कर रही हैं, मैं हँस-हँसकर श्रीराधा के इस प्रकार मान का अपलाप का दर्शन कब करूँगी॥२३१॥

रसागाधे राधाहृदि सरसि हंसः करतले,
लसवंशश्रोतस्यमृतगुणसङ्गः प्रतिमदम्।
चलत पिच्छोत्तंसः सुरचितवतंसः प्रमदया,
स्फुरद् गुजागुच्छः सहि रसिकमौलिमिलतु माम्॥२३२॥

जो अगाध रसपूर्ण श्रीराधा हृदय सरोवर के हंसस्वरूप हैं, जिनके करतल में अमृतगुणवर्षक, वंशी शोभित है, जिनके मस्तक में चंचल मयूरपिच्छ का मुकुट, प्रिया के द्वारा रचित कर्णभूषण, कण्ठ में गुंजामाला शोभित है, वे रसिकमौलि निश्चय ही मेरे साथ मिलित होंगे॥२३२॥

अकस्मात् कस्याश्चिन्नववसनमाकर्षति परां,
मुरल्याधम्मिल्ले स्पृशति कुरुतेऽन्याकरधृतिम्।
पतन्नित्यं राधापदकमलमूले ब्रजपुरे,
तदित्थं वीथीषु भ्रमति स महालम्पटमणिः।।२३३॥

महालम्पटमणि श्रीकृष्ण ब्रजपुर में अकस्मात् किसी का नववसन आकर्षण कर रहे हैं। मुरली द्वारा किसी की कबरी का स्पर्श करते हैं, किसी का हस्त धारण कर रहे हैं, नित्य श्रीराधाचरणों में लोट लगा रहे हैं, इस रीति से ब्रज के पथ-पथ में भ्रमण कर रहे हैं।।२३३॥

एकस्या रतिचौर एव चकित चान्यास्तनान्ते करं,
कुर्य्यात् कर्षति वेणुनास्य सुदृशो धम्मिल्लमल्ली स्त्रजम्।
धत्तेऽन्याभुजवल्लिमुत्पुलकितां सङ्केतयत्यन्यया,
राधायाः पदयोर्लुंठत्यलममुं जानेमहालम्पटम्।।२३४॥

एक रति अपहरण करते-करते चकित होकर अपर के वक्षोज में हस्तार्पण कर, अन्य सुलोचना की कबरीस्थित मल्लिका माला का आकर्षण वेणु से कर रहे हैं, किसी की पुलकिता भुजवल्ली को धारण कर अन्य के साथ कुंजान्तर में प्रविष्ट होने का संकेत करते हैं, सुतरां श्रीराधा के पदद्वय में लुण्ठित होना निरर्थक है, मैं उन महालम्पट को जानती हूँ॥२३४॥

प्रियांसे निक्षिप्तोत्पुलकभुजदण्डः क्वचिदपि,
भ्रमन् वृन्दारण्ये मदकलकरीन्द्राद्भुतगतिः।
निजां व्यञ्जन्नत्यद्भुत सुरतशिक्षा क्वचिदहो,
रहः कुञ्ज गुञ्जाध्वनितमधुपे क्रीड़ति हरिः।।२३५।।

अहो ! हरि-श्रीकृष्ण, प्रिया के स्कन्ध में उद्दाम पुलकयुक्त भुजदण्ड का आरोपण कर मदकल करीन्द्र की भाँति अद्भुत गति से श्रीवृन्दावन में भ्रमण कर रहे हैं, कहीं पर मधुपगजित रह:कूञ्ज में निज अत्यदभुत कन्दर्पकेलि शिक्षा को प्रकट कर क्रीड़ा कर रहे हैं।।२३५।।

दूरे स्पृष्ठादिवार्ता न कलयति मनाङ्नारदादीन् स्वभक्तान्,
श्रीदामाद्यैः सुहृद्भिर्नमिलति च हरेत् स्नेहवृद्धिं स्वपित्रोः।
किन्तु प्रेमैक सीमां मधुररससुधासिन्धुसारैरगाधां,
श्रीराधामेव जानन्मधुपतिरनिशं कुञ्जवीथीमुपास्ते॥२३६॥

सृष्टादि वार्ता का प्रसंग तो क्या है-नारदादि स्वभक्तगण की सुध भी नहीं लेते हैं, श्रीदामादि सुहृद् वर्ग के साथ भी नहीं मिलते हैं, यहाँ तक कि पिता-माता की स्नेह वृद्धि को भी नहीं चाहते हैं, किन्तु मधुपति श्रीकृष्ण, मधुर रससुधासिन्धुसार द्वारा अगाध प्रेमैकसीमा श्रीराधा को ही जानकर सर्वदा कुंज पथ में ही अवस्थान करते रहते हैं।।२३६॥

सुस्वादुसुरसतुन्दिलमिन्दीवरसुन्दरं किमपि।
अधिवृन्दाटवि नन्दति राधावक्षोजभूषणं ज्योतिः।।२३७॥

श्रीवृन्दावन में अनिर्वचनीय सुस्वादु सुरसतुन्दिल इन्दीवर वृन्दसुन्दर श्रीराधा वक्षोज भूषणज्योति आनन्द प्राप्त हो रहे हैं।।२३७॥

कान्तिः क्वापिपरोज्ज्वला नवमिलच्छ्रीचन्द्रिकोद्भासिनी,
रामाऽत्यद्भुतवर्णकाञ्चितरुचिर्नित्याधिकाङ्गच्छविः।
लज्जानम्रतनुः स्मयेन मधुरा प्रीणातिकेलिच्छटा,

सन्मुक्ताफलचारुहार सुरुचिः स्वात्मार्पणेनाच्युतम् ॥२३८॥

अनिर्वचनीया परोज्ज्वालाकान्ति नवसंगमशोभा चन्द्रिकोद्भासिनी, अद्भुतवर्ण कांचितरुचि, नित्याधिकाच्छवि, लज्जानम्रतनु, गर्वमधुरा, केलि विलासिनी, सुन्दरमुक्तामाला की शोभाशालिनी श्रीराधा निज आत्मा समर्पण के द्वारा अच्युत को सन्तुष्ट कर रही हैं॥२३८॥

यन्नारदाजेशशुकैरगम्यं वृन्दावने वजुल मञ्जुकुजे।
तत् कृष्ण चेतो हरणैकविज्ञमत्रास्ति किञ्चित् परमं रहस्यम्॥२३९॥

इस श्रीवृन्दावन में मनोहर वेतस कुंज में नारद, अज, ईश, शुकदेव का भी अनधिगम्य, श्रीकृष्ण मनोहरण हेतु एकमात्र विज्ञ कुछ परम रहस्य विद्यमान है।।२३९॥

लक्ष्मीर्यस्य न गोचरी भवति यन्नापुः सखायः प्रभोः,
संभाव्योऽपि विरिञ्चि नारदशिव स्वायम्भुवाद्यैर्न यः।
यो वृन्दावन नागरीपशुपति स्त्रीभावलभ्यः कथं,
राधामाधवयोर्ममास्तु सरहोदास्याधिकारोत्सवः।।२४०॥

जो लक्ष्मी के भी गोचरीभूत नहीं हैं, श्रीकृष्णगण भी जिनको प्राप्त करने में असमर्थ हैं, विरिञ्चि नारद, शिव, स्वायम्भुवादि को भी जो अलभ्य हैं, जो श्रीवृन्दावन नागरी गोपांगनागण के भाव से लभ्य है, उन श्रीराधामाधव के रहः दास्याधिकारोत्सव में अधिकार मेरा हो॥२४०॥

उच्छिष्टामृतभुक्तवैवचरितं शृंण्वंस्तवैव स्मरन्,
पादाम्भोजरजस्तवैव विचरन् कुजांस्तवैवालयान्।
गायन् दिव्यगुणांस्तवैव रसदे पश्यं स्तवैवाकृतिं,
श्रीराधेतनुवाङ्मनोभिरमलैः सोऽहं तवैवाश्रितः।।२४१॥

हे श्रीराधे ! हे रसदे ! मैं आपका उच्छिष्टामृतभुक हूँ। मैं आपकी चरित गाथा का श्रवण करते-करते श्रीचरण-कमल रजः का स्मरण करते-करते कुंजालय में विचरण करते-करते दिव्य गुणावली का गान करते-करते एवं आपकी श्रीमति का दर्शन करते-करते शूद्ध कायवाक्य मन के द्वारा मैं आपके ही आश्रित हूँ॥२४१॥

क्रीड़न्मीनद्वयाक्ष्याः स्फुरदधरमणीविद्रुमश्रोणिभार,
द्वीपायामान्तराल स्मरकलभकटाटोप वक्षोरुहायाः।
गम्भीरावर्त्तनाभेर्बहुल हरिमहाप्रेम पीयूषसिन्धोः,
श्रीराधायाः पदाम्भोरुह परिचरणे योग्यतामेवमृग्ये ।।२४२॥

जिनके नयनयुगल क्रीड़ाशील मीन के समान है, जिनके अधर में मणि विद्रुम स्फुरित है एवं नितम्बरूप द्वीप के अन्तराल में कन्दर्पकरी शिशु के कुम्भद्वय की शोभा की भाँति जिनके वक्षोजद्वय की शोभा है, जिनकी नाभि गभीर आवर्त्तयुक्त है एवं जो विपुल श्रीकृष्णप्रेमामृत की सिन्धुस्वरूपा हैं, उन श्रीराधा के चरण-कमलों की परिचर्या करने की योग्यता मात्र की ही मैं आकांक्षी हूँ॥२४२॥

मालाग्रन्थन शिक्षया मृदुमृदु श्रीखण्डानिर्घर्षणा,

देशेनाद्भुत मोदकादि विधिभिः कुञ्जान्तसंमार्जनैः।
वृन्दारण्यरहः स्थलीषु विवशा प्रेमार्तिभारोद्गमात्,
प्राणेशं परिचारकैः खलु कदा दास्यामयाधीश्वरी॥२४३॥

श्रीवृन्दावन की निभृत निकुंज में प्रेमार्तिभारविवशा अधीश्वरी श्रीराधा पुष्पमाला निर्माण की शिक्षा देकर तथा चन्दन घर्षण का आदेश देकर, अद्भुत लड्डुकादि निर्माण का विधान देकर एवं कुंजप्रान्त पर्यन्त समाजन करने का आदेश देकर, प्राणप्रिय श्रीकृष्ण के उद्देश्य से सेवा शिक्षादान कब करेंगी? ॥२४३॥

प्रेमाम्भोधि रसोल्लसत्तरुणिमारम्भेण गम्भीरदृग्,
भेदाभङ्गि मृदुस्मितामृतनवज्योत्स्नाञ्चितश्रीमुखी।
श्रीराधा सुखधामनि प्रविलसद्वृन्दाटवी सीमनि,
प्रेयोत्के रतिकौतुकानि कुरुते कन्दर्पलीलानिधिः॥२४४॥

प्रेमाम्भोधि श्रीकृष्ण के रसोल्लासकारी तारुण्य के आरम्भ में प्रफुल्ल जिनकी गम्भीर दृष्टिभंगी एवं जो सभंगि मृदुहास्यामृतरूप नवज्योत्स्ना प्रफुल्ल श्रीमुखी हैं, वे कन्दर्प लीलानिधि श्रीराधा, शोभाशाली श्रीवृन्दावन की सुखमय कुंज में प्रियतम के अंक में अति कौतुकयुक्त रतिक्रीड़ा कर रही हैं।।२४४॥

शुद्धप्रेमविलासवैभवनिधिः कैशोरशोभानिधि,
दग्धी मधुराङ्गभङ्गिमनिधिावण्यसम्पन्निधिः।
सौन्दर्यैक सुधानिधिर्मधुपतेः सर्वस्वभूतोनिधिः,
श्रीराधाजयतान्महारसनिधिः कन्दर्पलीलानिधिः।।२४५॥

अप्राकृत प्रेमविलास वैभवनिधि, कैशोर शोभानिधि, वैदग्धीगण के मधुर अंग चातुर्यनिधि, लावण्यवैभवनिधि, महारसनिधि, कन्दर्प लीलानिधि, सौन्दर्यैक सुधानिधि एवं श्रीकृष्ण की सर्वस्वभूतोनिधि श्रीराधा जययुक्त हो रही हैं।।२४५॥

नीलेन्दीवरकान्तिलहरी चौरं किशोरद्वयं,
त्वय्येतत् कुचयोश्चकास्ति किमिदं रूपेण सम्मोहनम्।
तन्माभात्मसखीं कुरु द्वितरुणीय नौदृढ़ श्लिष्यति,
स्वच्छायामभिवीक्ष्य मुह्यति हरौ राधास्मितं पातु नः।।२४६॥

निज प्रतिबिम्ब अवलोकन से विमोहित होकर श्रीकृष्ण कहते हैं, तुम्हारे वक्षोजद्वय में नीलेन्दीवरवृन्द की कान्ति लहरी चौर किशोरद्वय की शोभा विद्यमान है, वे दोनों एवम्विध अनिर्वचनीय सम्मोहन है, अत्र मुझे अपनी सखी बना लो, तब यह द्वितरुणी हम दोनों को दृढालिंगन करेंगी, इस प्रकार श्रीहरि में मोह को देखकर, श्रीराधा का मंजुवदन मृदुहास्य से शोभित हो गया, वह हास्य हमारी रक्षा करे।।१४६॥

संगत्यापि महोत्सवेन मधुराकारांहृदि प्रयसः,
स्वच्छायामभिवीक्ष्य कौस्तुभमणौ सम्भुतशोकक्रुधा।
उत्क्षिप्तप्रियपाणिं तिष्ठ सुनयेत्युक्त्वा गतायावहिः,
सख्यैसासनिवेदनानि किमहं श्रोष्यामि ते राधिके॥२४७॥

हे श्रीराधिके ! महोत्सव में सम्मिलित होकर भी प्रियतम के हृदयस्थित कौस्तुभमणि में मधुराकार निज प्रतिबिम्ब का दर्शन कर रोष तथा क्षोभ से प्रियतम के हस्त को उठाकर रहने दो, मैं तुमसे विनय करके बाहर जाऊँगी और सखियों से निवेदन करूँगी, यह सब क्या मैं देख सकूँगी ? ॥२४७॥

महामणिवर नजं कुसुम चञ्चयैरजचितं,
स्फुरन्मरकतप्रजाग्रथितमोहितश्यामलम्।
महारसमहीपतेरिव विचित्रसिद्धासनं,
कदा नु तव राधिके कवरभारमालोकये॥२४८॥

हे श्रीराधिके ! महामणिमाला शोभित कुसुम कलाप, व्याप्त महामरकत प्रभाग्रथित श्यामल एवं महारस महीपति के विचित्र सिद्धासन के समान आपके कबरी भार का दर्शन मैं कब करूँगी ? ॥२४८॥

मध्ये मध्ये कुसुम खचितं रत्नदाम्ना निबद्धं,
मल्लीमाल्यैर्घनपरिमलैर्भूषितं लम्बमानैः।
पश्चाद्राजन्मणिवरकृतोदारमाणिक्यगुच्छं,
धम्मिल्लं ते हरिकरधृतं कर्हि पश्यामि राधे॥२४९॥

हे श्रीराधे ! मध्य-मध्य में कुसुम खचित, रत्नमाला निबद्ध, घन परिमलयुक्त लम्बमान् मालती माल्य के द्वारा विभूषित, पश्चात में महामाणिक्य गुच्छ शोभित एवं श्रीहरि करधृत आपकी धम्मिल्ल का दर्शन मैं कब करूँगी।।॥२४९।।

विचित्राभिर्भङ्गीविततिभिरहो चेतसि परं,
चमत्कारं यच्छल्ललितमणिमुक्तादिलसितः।
रसावेशाद्वित्तः स्मरमधुरवृत्ताखिलमहोऽ-
द्भुतस्ते सीमन्ते नवकनकपट्टो विजयते॥२५०॥

अहो आपके सीमन्त में ललितमणि मुक्तादि लसित रसावेश वित्त, कन्दर्प के अखिल मधुरकृत्य, महाद्भुत नवकनक पट्ट विचित्र भङ्गी विस्तार के द्वारा चित्त को परम विस्मय एवं आनन्द प्रदान कर सर्वोत्कर्ष के साथ शोभित हैं।।२५०॥

अहो द्वैधी कर्तुं कृतिभिरनुरागामृतरस,
प्रवाहैः सुस्निग्धैः कुटिलरुचिरः श्याम उचितः।
इतीयं सीमन्ते नवरुचिरसिन्दूररचिता,
सुरेखा नः प्रख्यापयितुमिव राधे विजयते॥२५१॥

अहो ! हे श्रीराधे ! आपके सीमन्त में नव रुचिर सिन्दूर रचिता यह सुरेखा, कुटिलरुचिर श्याम, सुस्निग्ध अनुरागामृतरस प्रवाह की क्रिया विशेष के द्वारा द्विधाभूत करने को उपयुक्त है, हम सबको विज्ञापित करने के निमित्त ही मानो, वह जययुक्त हो रही हैं ॥२५१॥

चकोरस्ते वक्त्रामृत किरणबिम्बे मधुर,
स्तव श्रीपादाब्जे जघनपुलिने खजनवरः।
स्फुरन्मीनोजातस्त्वयि रस सरस्यां मधुपतेः,

कृष्णराम खोखरेल लालबन्दी, सर्लाही, नेपाल फोन:-९८४४९५३५०

सुखाटव्यां राधे त्वयि च हरिणस्तस्य नयनम्।।२५२॥

हे श्रीराधे ! मधुपति श्रीकृष्ण के नयन, आपके वदनचन्द्र का सुधापान करने में चकोरस्वरूप हैं, आपके श्रीचरण-कमल में मधुकर, जघन पुलिन में खञ्जनवर, रससरसी में चंचल मीन एवं सुखारण्यरूप आपमें हरिणस्वरूप में उत्पन्न हुआ है।।२५२॥

स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा मृदुकरतलेनाङ्गमङ्गं सुशीतं,
सान्द्रानन्दामृतरसह्रदे मज्जतो माधवस्य।
अङ्के पङ्केरुहसुनयना प्रेममूर्तिः स्फुरन्ती,
गाढ़ाश्लेषोन्नमितचिवुका चुम्बिता पातु राधा।।२५३॥

मृदुकरतल द्वारा सुस्निग्ध प्रति अंग का स्पर्श कर निविड आनन्दामृत रसह्रद में निमज्जित माधव के अंग में शोभिता पंकज नयना प्रेममूर्ति, गाढालिंगन से उन्नमित चिवका, चुम्बिता श्रीराधा हमारी रक्षा करें।।२५३॥

सदा गायं गायं मधुरतरराधाप्रिययशः,
सदा सान्द्रानन्दा नवरसदराधापतिकथाः।
सदा स्थायं स्थायं नवनिभृतराधारतिवने
सदा ध्यायं ध्यायं विवशहृदि राधापदसुधाः।।२५४॥

श्रीराधा के नव निभृत केलिकुंज कानन में निरन्तर अवस्थान पूर्वक, मधुरादपि मधुर श्रीराधा प्रिय यश एवं निविड़ आनन्दस्वरूपा नवरसद श्रीराधापति की कथा का गान सर्वदा करते-करते एवं श्रीराधापद सुधा का ध्यान सर्वदा करते-करते मैं कब विवश हृदय हो जाऊँगी ? ।।२५४॥

श्यामश्यामेत्यमृतरससंस्राविवर्णान् जपन्ती,
प्रेमौत्कण्ठ्यात् क्षणमपि सरोमाञ्चमुच्चैर्लपन्ती।
सर्बत्रोच्चाटनमिव गता दुःखदुःखेन पारं,
काङ्क्षन्तयहो दिनकरमलं क्रुध्यती पातु राधा॥२५५॥

जो हे श्याम ! हे श्याम ! इस अमृतरसम्राविवर्णसमूह का जप करती रहती हैं, प्रेमोत्कण्ठा से रोमांच के साथ उच्चैःस्वर से गाती रहती हैं, जो सर्वत्र उच्चाटन प्राप्त हैं, अनेक कष्ट से दिवसानसान की कामना करती हैं एवं दिनकर के प्रति वृथाक्रुद्ध हो जाती हैं, वह श्रीराधा मेरी रक्षा करें॥२५५॥

कदाचिद् गायन्ती प्रियरतिकलावैभवगतिं,
कदाचिद् ध्यायन्ती प्रियसहभविष्यद् विलसितम्।
अलं मुञ्चामुञ्चेत्यपि मधुरमुग्धप्रलपितै-
र्नयन्ती श्रीराधा दिनमिह कदा नन्दयतु नः॥२५६॥

कभी प्रियतम की रतिकला वैभवगति का गान करती हैं, प्रिय के साथ भविष्यत् केलिविलास का ध्यान करती हैं, परिहित भूषणादि मोचन कर उससे प्रयोजन क्या है ? इस प्रकार अति मधुर प्रलाप के साथ दिन यापन करती रहती हैं, वह श्रीराधा कब हम सभी को आनन्द प्रदान करेंगी॥२५६॥

श्रीगोविन्द ब्रजवरबधूवृन्दचूड़ामणिस्ते,
कोटिप्राणाभ्यधिकपरमप्रेष्ठपादाब्जलक्ष्मीः।

कैकयेणाद्भुतनवरसेनैव मां स्वीकरोतु,
भूयोभूयः प्रतिमुहुरधिस्वाम्यहं प्रार्थयामि।।२५७॥

हे श्रीगोविन्द ! हे अधिस्वामिन् ! आपके कोटि प्राण की अपेक्षा अधिक प्रेष्ठालक्ष्मी हैं, जिनके पादपद्म में पतिता अद्भुत नवरसकैङ्कर्य के साथ, ब्रजबधूवृन्द की चूडामणि श्रीराधा मुझे अंगीकार करें, प्रति मुहूर्त में बारम्बार यही प्रार्थना करती हूँ॥२५७॥

अनेन प्रीता मे दिशति निजकैंकर्यपदवीं,
दवीयो दृष्टीनां पदमहह राधां सुखमयी।
निधायैवं चित्ते कुवलयरुचिं वर्हमुकुटं,
किशोरं ध्यायामि द्रुतकनकपीतच्छविपटम् ।।२५८॥

अहो ! मैं गलित सुवर्णपीतच्छविवसनमयूरपिञ्छ रचित मुकुटधारी, नीलेन्दीवरवरकान्ति किशोर श्रीकृष्ण का ध्यान हृदय में करती रहती हूँ, इससे सुखमयी श्रीराधा अतिशय प्रीता होकर अति दुर्लभ निज कैङ्कर्य पदवीं मुझको प्रदान करें।।२५८॥

ध्यायं स्तशिखिपिच्छमौलिमनिशं तन्नाम संकीर्तय-
न्नित्यं तच्चरणाम्बुजं परिचरंस्तन्मन्त्रवर्यं जपन्।
श्रीराधापददास्यमेव परमाभीष्टं हृदा धारयन्,
कर्हि स्यां तदनुग्रहेणपरमोद्भूतानुरागोत्सवः।।२५९॥

शिखिपिञ्छमौलि श्रीकृष्ण का ध्यान सर्वदा करते-करते एवं उनका नाम कीर्तन सर्वदा करते-करते उनके श्रीचरण-कमल की परिचा नित्य करते-करते उनके मन्त्रराज का जप नित्य करते-करते एवं परमाभीष्ट श्रीराधा पददास्य को हृदय में धारणकर श्रीराधा के अनुग्रह से परमोद्भूत अनुरागोत्सव मेरा कब होगा ? ॥२५९।।

श्रीराधारसिकेन्द्ररूपगुणवद्गीतानि संभावयन्,
गुजामञ्जुलहारवर्हमुकुटाद्यावेदयंश्चाग्रतः।
श्यामाप्रेषितपूगमाल्यनवगन्धाद्यैश्च संप्रीणयं,
स्त्वत्पादाब्जनखच्छटारसहृदे मग्नः कदा स्यामहम्।।२६०॥

श्रीराधारसिकेन्द्र के रूप, गुणादि समन्वित गीत समूह का श्रवण कराकर, सुन्दर गुंजाहार एवं वर्हमुकुटादि पुरोभाग में समर्पण कर एवं श्यामाप्रेरित गुवाग माल्यं नवगन्धादि के द्वारा सम्यक् रूप से प्रीति सम्पादन करते-करते मैं कब उन दोनों के चरण-कमलों के छटारूप रसहद में निमग्न हो जाऊँगी॥२६०॥

क्वासौ राधा निगमपदवी दूरगा कुत्र चासौ,
कृष्णस्तस्याः कुचमुकुलयोरन्तरैकान्तवासः।
क्वाहं तुच्छः परममधमः प्राण्यहो गयकर्मा,
यत्तन्नाम स्फुरति महिमा ह्येष वृन्दावनस्य।।२६१॥

निगम पदवीं से दूर में वर्तमान अर्थात् विधि की अगोचरा श्रीराधा कहाँ और उनके स्तन कमल युगल के मध्य में एकान्त भाव से अवस्थानकारी कहाँ ? अहो ! और कहाँ मैं अति अधम, गर्हितकर्मा तुच्छजीव ! तथापि जब उनके नाम स्फुरित हो रहे हैं, तब वह निश्चय ही श्रीवृन्दावन की महिमा हैं।।२६१॥

वृन्दारण्ये नवरसकलाकोमल प्रेममूर्ते:,
श्रीराधायाश्चरणकमलामोदमाधुर्य्यसीमा।
राधां ध्यायन रसिक तिलकेनात्तकेलीविलासं,
तामेवाहं कथमिहतनुं न्यस्य दासीभवेयम्॥२६२॥

मैं इस श्रीवृन्दावन में रसिक शिरोमणि के साथ केलिविलासवती श्रीराधा का ध्यान करते-करते तनु त्यागकर, उन नवरसकला कोमलप्रेममूर्ति श्रीराधा के चरण-कमल की सुगन्धमाधुर्य्य की अवधिस्वरूप दासी कैसे बनूँगी ? ॥२६२॥

राका कालिन्दि त्वयि मम निधि: प्रेयसा खेलतोऽभूद्,
भो भो दिव्याद्भुततरुलतास्तत्करस्पर्शभाज:।
हे राधाया रतिग्रहशुका हे मृगा हे मयूरी,
भूयोभूयो: प्रणतिभिरहं प्रार्थये वोऽनुकम्पाम् ॥२६३॥

हा यमुने ! तुम्हारे तट में ही मेरी निधि-प्रियतम के साथ क्रीड़ा करती रहती थीं, ओह ! दिव्याद्भुत तरुलतागण, आप सभी उनके कर-स्पर्शरूप सौभाग्य के पात्र हैं; हे श्रीराधा के केलिभवनस्थ शुकवृन्द ! हे मयूर समूह ! हे मृगयूथ ! मैं आप सभी की भूयोभूय: नमस्कार पूर्वक कृपा प्रार्थना कर रही हूँ॥२६३॥

बहन्ती राधाया: कुचकलसकाश्मीरजमहो,
जलक्रीड़ावेशाद्गलितमतुलप्रेमरसदम्।
इयं सा कालिन्दीविकसित नवेन्दीवररुचि-
च्छटामन्दीभूतं हृदयमिह सन्दीपयतु मे ॥२६४॥

अहो ! जो जलक्रीड़ावेश से गलित अनुपम प्रेमरसद श्रीराधा के कुचकलशलग्न कुकुम पंक को वहन करती रहती हैं, वह प्रफुल्ल नवेन्दीवररुचि श्रीयमुना मेरे इस मन्दीभूत हृदय को सर्वदा सन्दीपित करें।।२६४॥

सद्योगीन्द्रसुदृश्यसान्द्ररसदानन्दैकसन्मूर्तय:,
सर्वेऽप्यद्भुतसन्महिम्नि मधुरे वृन्दावने सङ्गता:।
ये क्रूरा अपि पापिनो नच सतां संभाष्य दृश्याश्च ये,
सर्वान् वस्तुतयानिरीक्ष्य परमस्वाराध्यबुद्धि मम॥२६५ ॥

अद्भुत महिमाविशिष्ट मधुर श्रीवृन्दावन में सम्मिलित क्रूर ऐसा कि जो साधुगणों के सम्भाषण दर्शन के भी अयोग्य हैं, वे सब ही योगीन्द्रगणों के सुदृश्य निविड़ रसद आनन्दैक सत्ताप्रदरूप में मूर्त्तिमान् हैं, वस्तुत: उन सभी को निरीक्षण करके ही मेरी परम सुष्ठु आराध्य बुद्धि स्फुरित हो रही है।२६५॥

यद्राधापदकिङ्करीकृतहृदा सम्यग् भवेद्गोचरं,
ध्येयं नैव कदापि यद्धृदि विना तस्या: कृपास्पर्शत:।
यत् प्रेमामृतसिन्धुसाररसदं पापैकभाजामपि,
तद् वृन्दावन दुष्प्रवेशमहिमाश्चर्यं हृदि स्फू तु॥२६६॥

जो श्रीराधापद किंकरीकृत हृदयवृन्द के समीप में गोचरीभूत हैं, जो उनके कृपास्पर्शशून्य हृदय में कदापि ध्येय नहीं हैं, जो पापैकपरायण जनगण को रसामृतप्रद हैं, वे श्रीवृन्दावन के दुष्प्रवेश महिमाश्चर्य हृदय में स्फुरित होवें॥२६६॥

राधाकेलिकलासु साक्षिणि कदा वृन्दावने पावने,
वत्स्यामि स्फुटमुज्ज्वलाद्भुतरसे प्रेमैकमत्ताकृतिः।
तेजोरूपनिकुञ्ज एव कलयन् नेत्रादिपिण्डे स्थितं,
तादृक् स्वोचितदिव्यकोमलवपु स्वीयं समालोकये॥२६७॥

मैं कब प्रेमविवशाकृति होकर श्रीराधाकेलिकलासाक्षी प्रकट उज्ज्वलाद्भुतरसयुक्त पवित्र श्रीवृन्दावन में निवास करूँगी ? एवं तेजोरूप निकुंज कलित नेत्रादि पिण्डस्थित तादृश स्वीय उपयोगी दिव्य कोमल वपु का अवलोकन कब करूँगी।।२६७॥

यत्र यत्र मम जन्मकर्मभिर्नारकेऽथ परमे पदे मम।
राधिकारतिनिकुञ्जमण्डली तत्रतत्रहृदि मे विराजताम्।।२६८॥

नरक अथवा स्वर्ग में निजकृत कर्म से जिस किसी स्थान में मेरा जन्म क्यों न हो, उस-उस स्थान में ही श्रीराधा केलिनिकुंज मण्डल की स्मृति मेरे हृदय में वैसी ही विराजित होवे॥२६८॥

क्वाहं मूढ़मतिः क्व नाम परमानन्दैक सारं रसं,
श्रीराधाचरणानुभावकथया स्यन्दायमानागिरः।
लग्नाः कोमलकुञ्जपुञ्जविलसद् वृन्दाटवीमण्डले,
क्रीड़च्छ्रीवृषभानुजापदनखज्योतिश्छटाः प्रायशः।।२६९॥

मैं अति मूढ़मति कहाँ और कहाँ परमानन्द का साररसरूप श्रीनाम ? तथापि श्रीराधा के श्रीचरणानुभाव कथन के द्वारा निस्यन्दमान् मेरे वाक्य समूह प्रायशः कोमल कुंजपुंज विलसित श्रीवृन्दावन में संलग्न एवं क्रीड़ामान् श्रीराधा के पदनख ज्योति च्छटा से उद्भासित हो रहे हैं।२६९॥

श्रीराधे श्रुतिभि बुधैर्भगवताप्यामृग्यसवैभवे,
स्वस्तोत्रस्वकृपात एव सहजायोग्योऽप्यहं कारितः।
पद्येनैव सदापराधिनिमहन्मार्गे विरुध्य त्वदे,
काशे स्नेहजलाकुलाक्षि किमपि प्रीतिं प्रसादी कुरु ॥२७०॥

वेद समूह, नारदादि बुधगण एवं भगवान् विष्णु भी जिनके सवैभव का अन्वेषण करते रहते हैं, तादृश सवैभव विशिष्टे ! हे श्रीराधे ! त्वदीय स्वतोत्र में मेरी योग्यता का अहंकार होने पर भी वह भी आपकी कृपा से ही हुआ है, अतएव हे स्नेहजलाकुलाक्षि ! मैं पद्य रचना के द्वारा सर्वदा अपराधी होकर भी शरणागत हूँ, सुतरां मेरे प्रति अनिर्वचनीय कृपादृष्टि प्रदान करो॥२७०॥

अद्भुतानन्दलोभश्चेन्नाम्ना रससुधानिधिः,
स्तवोऽयं कर्णकलशै गृहीत्वा पीयतां बुधाः।।२७१॥

हे बुधगण ! यदि अदभुत आनन्दोपभोग में लोभ हो, तब श्रीराधारससुधानिधि नामक स्तव का पान कर्णकलश के द्वारा करते रहें।२७१॥

स जयति गौरपयोधिर्मायावादार्कतापसन्तप्तम्।
हन्नभ उदशीतलयत् यो राधारससुधानिधिना।२७२॥

जिन्होंने श्रीराधारससुधानिधि के द्वारा मायावादार्क ताप सन्तप्त हृदयाकाश को उत्तम रूप से शीतल किया है, वे श्रीगौरपयोधि जययुक्त हो रहे हैं।।२७२॥

इति श्रीश्रील प्रबोधानन्दसरस्वतिगोस्वामिपादविरचित:
श्रीश्रीराधारससुधानिधि: समाप्त:॥

कृष्णशरण पोखरेल लालबन्दी, सर्लाही, नेपाल, फोन:-९८४१५५३५०